वर्ष-13 अंक (1) जनवरी-जून 2019

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
वाराणसी (उत्तर प्रदेश)

संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति द्वारा
सब्जी किरण पत्रिका का विमोचन

संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति के साथ संस्थान व
मुख्यालय के निदेशक एवं अधिकारी

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

वर्ष-13 अंक (1) जनवरी-जून 2019

सर्वाधिकार
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)

संरक्षक एवं प्रकाशक

जगदीश सिंह, निदेशक

सम्पादक मण्डल

- प्रभाकर मोहन सिंह
- के.के. पाण्डेय
- डी.आर. भारद्वाज
- इन्दीवर प्रसाद
- एस.के. सिंह
- आर.एन. प्रसाद
- सुरेश कुमार वर्मा
- ए.एन. त्रिपाठी
- राजशेखर रेड्डी
- रामेश्वर सिंह

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
दूरभाष : 91-542-2635247 / 2635236 / 2635237
फैक्स : 91-5443-229007
ई-मेल : directoriivr@gmail.com वेबसाइट : www.iivr.org.in

© भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उ.प्र.)
पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं।
संस्थान अथवा राजभाषा प्रकोष्ठ का इनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

लेख (क्रुतीदेव 010 के 14 शब्दाकार में) एवं सुझाव भेजें
संपादक, सब्जी किरण
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी– 221 305 (उ.प्र.)
ई–मेल : directoriivr@gmail.com, वेबसाइटः www.iivr.org.in
मो. : +91–9536243388, 9415301823, 9935490563

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य (वर्ष 2019–20)

डा. जगदीश सिंह	अध्यक्ष
डा. सुरेश कुमार वर्मा	सदस्य
डा. डी.आर. भारद्वाज	सदस्य
डा. ए.एन. त्रिपाठी	सदस्य
डा. इन्दीवर प्रसाद	सदस्य
डा. राजशेखर रेड्डी	सदस्य
श्री एस.के. सिंह	सदस्य
डा. रामेश्वर सिंह	सदस्य सचिव

प्रकाशक

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)
दूरभाष : 91-542-2635247 / 2635236 / 2635237
फैक्स : 91-5443-229007
ई-मेल : directoriivr@gmail.com वेबसाइट : www.iivr.org.in

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान
पो.बैग नं. 01, पो.आ. जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी-221 305 (उ.प्र.)

ICAR-Indian Institute of Vegetable Sciences
Post Bag No. - 01, Post Office-Jakhini
(Shahanshahpur), Varanasi-221 305 (U.P.)

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
Agrisearch with a human touch

प्राक्कथन

देश के किसानों की आर्थिक स्थिति मजबूत एवं उनकी आय दुगना करने करने के लिए भारत सरकार ने वर्ष 2022 तक का लक्ष्य रखा है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कृषि फसलों की लागत को कम करना एवं उन्नतशील तकनीकी एवं किस्मों का उपयोग कर उत्पादन को प्रति इकाई क्षेत्र बढ़ाना है। लागत को कम करने में बीज का उपचार, मृदा उपचार, खरपतवारनाशी का प्रयोग, समय से बुवाई/रोपण, अन्तर्वती फसल उगाना एवं औद्यानिक फसलों के बीच छाया सहनशील फसलें उगाना आदि सम्मिलित हैं। उन्नतशील तकनीकी में प्रक्षेत्र के फसल अवशेष प्रबंधन एवं गोबर की खाद, वर्मी कम्पोस्ट/नेडप कम्पोस्ट तैयार करना एवं बुवाई/रोपण से पहले प्रयोग करना, बुवाई पूर्व बीज/सीडलिंग जड़ों का उपचार करना, असमय फसल उगाने के लिए पालीहाउस/ग्लासहाउस का प्रयोग करना, सिंचाई जल की बूंद–बूंद का उपयोग बढ़ावा देने हेतु फसलों में ड्रिप सिंचाई विधि, असमतल भूमि पर उगायी गयी फसलों की सिंचाई के लिए स्प्रिकंलर का प्रयोग, लता वाली सब्जियों को सहारा देकर परगोले पर चढ़ाना, फसल चक्र में विविध फसलों को उगाना आदि को समाहित करना चाहिये। सब्जियों की उन्नतशील कीट एवं रोग प्रतिरोधी किस्मों/संकरों, अच्छी गुणवत्ता व भण्डारण क्षमता के अलावा प्रति इकाई अधिक उत्पादन देने वाली तकनीकों का प्रयोग कर किसान अपना उत्पादन 30–40 प्रतिशत तक बढ़ा सकते हैं। संस्थान में उन्नत सस्य तकनीकों का प्रशिक्षण एवं उन्नतशील सब्जी किस्मों का बीज किसानों को उपलब्ध कराया जाता है। इसके आलावा कृषक गोष्ठी एवं किसान मेला के अवसर पर उपयोगी तकनीकों एवं सुधरी किस्मों का प्रदर्शन किया जाता है, जिसका लाभ उठाकर कृशक अपनी आय में आशातीत वृद्धि कर सकते हैं।

सब्जी किरण के इस अंक में पौधशाला प्रबंधन, सब्जियों के पोषण मूल्य का महत्व, जैविक खेती, अल्प उपयोगी सब्जियों का महत्व, कीट एवं रोग नियंत्रण, सब्जी प्रसंस्करण एवं संकर बीज उत्पादन पर बहुमूल्य जानकारी दी गयी है, जो देश के किसानों, कृषि उद्यमियों, छात्रों, शोध कर्त्ताओं, वैज्ञानिकों एवं प्राध्यापकों के लिए उपयोगी साबित होगी।

धन्यवाद !

जगदीश सिंह
निदेशक

सब्जी किरण

(राजभाषा पत्रिका)

वर्ष-13 अंक (1) जनवरी-जून 2019

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
	पोषण		
1.	मानव स्वास्थ्य में सब्जियों के जैव क्रियाशील यौगिकों का महत्व	जगदीश सिंह, रामेश्वर सिंह एवं सुनील गुप्ता	1
	आय सृजन (मुनाफा)		
2.	मूली के बीज उत्पादन को व्यवसाय के रूप में अपनायें	बी.के. सिंह एवं सौरभ सिंह	6
3.	कम लागत पर सब्जियों का संकर बीज उत्पादन	राजेश कुमार, रामेश्वर सिंह एवं पी.एम. सिंह	11
	उत्पादन तकनीक		
4.	गुणवत्तायुक्त सब्जी उत्पादन के लिए संरक्षित खेती	हरे कृष्ण, अनंत बहादुर, इंदीवर प्रसाद, एस .एन.एस. चौरसिया, मनोज सिंह, इंद्रमणि, मो. अरशद नदीम एवं जगदीश सिंह	15
5.	भूली बिसरी सब्जीः बाकला	इन्दीवर प्रसाद, राकेश दुबे, हरे कृष्ण, राजशेखर रेड्डी एवं मनीष सिंह	19
	फसल बचाव		
6.	बीज जनित रोगों की पहचान	रामेश्वर सिंह, पी.एम. सिंह एवं ए.एन. त्रिपाठी	23
7.	सब्जियों में पीड़कनाशियों का सुरक्षित उपयोग	ए.एन. त्रिपाठी	28
8.	सब्जियों में कीट नियंत्रण के सामान्य सिद्धांत तथा कीट रसायनों का संतुलित उपयोग	ए.पी. सिंह, जयदीप हालदार एवं ए.बी. राय	34
	नवीन सब्जी		
9.	उपेक्षित एवं मरू भूमि के लिये वरदानः सब्जी नागफनी	डी.आर. भारद्वाज, टी. चौबे, के. के. गौतम, ए.के. सिंह, डी.पी. महाराणा एवं संदीप कुमार	40
	जैव स्रोत		
10.	सब्जी उत्पादन पर नील–हरित शैवालों का प्रभाव	ऋषि कुमार शर्मा एवं अच्युत कुमार सिंह	44
12.	सब्जियों की जैविक खेती	एस.के. सिंह, राम चन्द्र, एस .एन.एस. चौरसिया, राधवेन्द्र प्रताप सिंह एवं संतोष कुमार सिंह	47
	परिस्थिति प्रबंधन		
13.	ग्रीष्मकालीन पत्तागोभी उगायेंः भरपूर लाभ कमायें	श्रीप्रकाश सिंह, यशपाल सिंह, शुभदीप रॉय, नीरज सिंह एवं डी.आर. भारद्वाज	52
14.	कम वर्षा वाले क्षेत्रों में ड्रैगन फल उगायें	के.के. गौतम, डी.आर. भारद्वाज, दुर्गा प्रसाद महारणा, लोकेश यादव, आर.के. दुबे, ए.के. सिंह, पी.एम. सिंह और जगदीश सिंह	55

	प्रसंस्करण		
15.	आर्थिक सम्पन्नता के लिए अचार बनायें	अनुराधा रंजन कुमारी, अशोक राय, कमलेश मीना, अभय कुमार सिंह एवं रजनीश श्रीवास्तव	60
16.	सब्जी प्रसंस्करणः एक नवीनतम दृष्टिकोण	सुधीर सिंह	64
	गुणकारी		
17.	स्वास्थ्य गुणों से भरपूर एलोवेरा	सुरेश कुमार वर्मा, राम चन्द्र, डी .आर. भारद्वाज एवं इन्दीवर प्रसाद	67
18.	बहुपयोगी अजवायन	राम चन्द्र, रामेश्वर सिंह, एस . के. वर्मा, ओ. पी. ऐश्वथ एवं बी. सिंह	69
	भण्डारण		
19.	आलू भण्डारण की सुरक्षित तकनीकें	सिद्धार्थ कुमार सिंह एवं राज कुमार सिंह	71
	सावधानियाँ		
20.	व्यवसायिक सब्जी उत्पादन के लिए क्या करें एवं क्या नहीं करें?	एस.एम. वनिता एवं ए.टी. रानी	74
	राजभाषा		
21.	राजभाषा हिंदी को जानें	आत्मा नंद त्रिपाठी	77
	कार्यशाला (11 मार्च, 2019)		79
	कार्यशाला (6 जून, 2019)		80
	संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति का निरीक्षण एवं क्रिया–कलाप		81

मानव स्वास्थ्य में सब्जियों के जैवक्रियाशील यौगिकों का महत्व

जगदीश सिंह, रामेश्वर सिंह एवं सुनील गुप्ता

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

विश्व में कुल 402 प्रकार के सब्जियों की खेती की जाती है जो 230 वंशों एवं अनेकों प्रजातियों के अन्तर्गत आती हैं। सामान्यतः कुल सब्जियों में 53 प्रतिशत सब्जियाँ पत्तियों वाली या मुलायम तने वाली, 15 प्रतिशत फल वाली एवं 17 प्रतिशत जड़ वाली सब्जियाँ है। सब्जियाँ मानव पोषण में विटामिन्स (सी, ए, बी–1, बी–6, बी–9, ई), खनिज पदार्थ, खाद्य रेशा एवं पादप रसायनों की मुख्य स्रोत हैं। सब्जियों के उपयोग से अनेकों प्रकार के कैन्सर जिसमें आमाशय, कोलोन, ब्रेस्ट, फेफड़ा एवं प्रोस्टेट के कैंसर में कमी आती है। सर्वेक्षण में यह देखा गया है कि भोजन में सब्जियाँ कम लेने से 31 प्रतिशत लोगों को दिल सम्बन्धी बीमारियाँ एवं 11 प्रतिशत लोगों में हृदयाघात की बीमारी होती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के रिपोर्ट 2007 के अनुसार असन्तुलित भोजन में कम मात्रा में सब्जियाँ, कमप्लेक्स कार्बोहाइड्रेट एवं खाद्य रेशा का प्रयोग करने के कारण प्रत्येक वर्ष 21 लाख लोगों की मृत्यु जीवन शैली आधारित बीमारियों से होती है।

सब्जियाँ बीमारियों के जोखिम को कैसे कम करती हैं, इसकी प्रणाली जटिल एवं अस्पष्ट है। भोजन के विभिन्न घटक स्वास्थ को लाभ पहुँचाने में विभिन्न पादप रसायन; एण्टीआक्सीडेण्ट के साथ मिलकर मानव शरीर में फ्री रेडिकल की क्रियाशीलता को कम करते हैं। पोटैशियम रक्तचाप (ब्लड प्रेशर) को नियंत्रित रखने में सहायक होता है। खाद्य रेशा विभिन्न सब्जियों में पाया जाता हैं, जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है। आँत को स्वस्थ बनाने, कोलेस्ट्राल कम करने, खून में ग्लूकोज की मात्रा को नियंत्रित करने एवं भोजन नली में खनिज पदार्थ एवं फाइटो रसायनों की क्रियाशीलता एवं फाइबर मेट्रिक्स से सम्बन्धित होती हैं। इस तरह भोजन में खाद्य रेशा बढ़ाने से सतृँप्त वसा व ट्रान्स वसा कम होती है जो संतुलित भोजन के लिए आवश्यक है। सब्जियों में अनेकों तरह के फाइटो रसायन चिन्हीकृत किये गये हैं, इनको बहुत से वर्गों में उनके रासायनिक संरचना एवं जैविक क्रिया के आधार पर विभेदित किया गया हैं। सब्जियों में पाये जाने वाले मुख्य जैविक क्रियाशील घटक रसायनिक संरचना एवं जैविक क्रिया के आधार पर फाइटोरसायन एण्टीआक्सीडेण्ट गुणों के साथ, 35 प्रतिशत कैरोटिनायड एवं 65 प्रतिशत फ्लेवोनायड्स से प्राप्त होता है।

कैरोटिनायड्स

पौधों में मिलने वाला कैरोटिनायड एक विशेष रंजक है जिससे सब्जियों एवं फलों का रंग पीला, नारंगी एवं लाल होता है। अभी तक 600 प्रकार के विभिन्न कैरोटिनायड्स चिन्हित किये गये हैं जिनमें 600 प्राकृतिक लीपोफिलिक पिगमेण्टस हैं, इनमें से 14 मानव के सिरम एवं 6 सब्जियों में चिन्हित किए गए हैं। लगभग 50 कैरोटिनायड्स विटामिन 'ए' में रूपान्तरित हो सकते हैं। यह अनुमान लगाया जाता है कि लगगभग 60 प्रतिशत के खाद्य विटामिन 'ए' पौधे हैं। बीटा कैरोटिन एवं प्रो–विटामिन 'ए' की

क्रियाशीलता सबसे अधिक पायी जाती है, जो नारंगी रंग के फल व सब्जियों में पाया जाता है। इसके अलावा अन्य सब्जियाँ जैसे–गाजर, कुम्हड़ा, शकर कंद, खूबानी, पालक एवं केल प्रमुख स्रोत हैं। बीटा कैरोटिन, मानव त्वचा को अल्ट्रावायलेट विकिरण से भी रक्षा करती है। अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि वीटा कैरोटिन वाले फल एवं सब्जियाँ खाने से कैंसर एवं दिल की बीमारियों का जोखिम कम हो जाता है।

कुछ विशिष्ट कैरोटिनायड जैसे– ल्यूटिन एवं जीयाजेन्थिन जो हरी एवं पीली पत्ती वाली सब्जियों में पाया जाता है। बढ़ती उम्र में होने वाली बीमारियों एवं मोतियाबिन्द को कम करने में सहायक होता है। केवल ल्यूटिन एवं जीयाजैन्थिन ऐसे कैरोटिनायड हैं जो आँख के रेटिना विशेषतः मैकुला में एकत्रित रहते हैं एवं आँख से सम्बन्धित बीमारियों से रक्षा करते हैं।

लाइकोपिन लाल कैरोटिनायड है जो टमाटर, तरबूज, गुलाबी ग्रेफ फ्रुट एवं अन्य लाल फलों में पाया जाता है। इसकी पहचान सबसे अधिक प्रभावी एण्टीआक्सडेण्ट के रूप में की गयी है। मानव एवं पशुओं पर किये गये अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि लाइकोपिन यकृत, मस्तिष्क, ब्रेस्ट, सरविक्स एवं प्रोस्ट्रेट कैंसर से सुरक्षा करता है। इसके साथ–साथ लाइकोपिन दिल की बीमारियों से भी बचाव करता है।

फ्लेवोन्वायड्स

फ्लेवोन्वायड्स फेनोलिक यौगिकों का समूह है जिसमें एन्थोसाइनिन, कैटेकिन्स एवं फ्लेवोनोल्स् आते हैं। लगभग 4000 से अधिक फ्लेवोन्याड्स चिन्हित किये गये हैं जो फलों एवं सब्जियों में पाये जाते हैं। इनकी उपलब्धता अधिकांशतः नीबूवर्गीय फल, ब्रोकोली, पत्तागोभी, खीरा, शिमला मिर्च इत्यादि हैं। एपिएसी कुल में आने वाली सब्जियाँ जैसे–सेलरी, पार्सले व गाजर में फ्लेवोन्वायड्स अधिक मात्रा में मिलता है। इसके साथ इसमें विटामिन सी एवं विटामिन ई पाया जाता है। लेट्यूस एवं चिकोरी में क्वेरसेटिन, फ्लेवेन्वायड्स एवं टोकोफेराल अधिक मात्रा में पाया जाता है। फैबेसी कुल की सब्जियाँ जैसे– सेम, मटर, सोयाबीन, चना के हरे एवं सूखे बीज में खाद्य रेशा एवं आइसो फ्लेवोन्वाफ्लेवेन्वायड्स एवं टोकोफेराल अधिक मात्रा में पाया जाता है। जो मानव स्वास्थ के लिए बहुत लाभदायक है एवं कैंसर, दिल सम्बन्धी बीमारियाँ एवं किडनी सम्बन्धी बीमारियों के बचाव में सहायक होता है।

क्वरसेटिन एक ऐसा फ्लेवोन्वायड है जो सेव के छिलका, लाल प्याज एवं लाल अंगूर में पाया जाता है। क्वरसेटिन सबसे अच्छा एण्टी हिस्टेमिन है जो एलर्जी से छुटकारा दिलाने एवं आंत के कैंसर से बचाव में सहायक होता है।

एन्थोसाइनिन्स

लेट्यूस का रंग लाल, एन्थोसाइनिन के कारण होता है। एन्थोसाइनिन बायोलाजिकल सिस्टम में फ्री

रेडिकल की क्रियाशीलता को कम करता है। इसी गुणों के कारण एन्थोसाइनिन एण्टी आक्सीडेण्ट के रूप में प्रयोग होता है।

खिलाड़ियों में अधिक श्रम एवं अभ्यास में आक्सीजन का उपयोग अधिक होने से फ्री रेडीकल्स अधिक बनते हैं, जिसकी सफाई के लिए आवश्यक होता है। फ्री रेडिकल कोशिकाओं के घटक जैसे– कोशिका झिल्ली एवं डी.एन.ए. को नष्ट करते हैं।

ग्लूकोसिनोलेट

ग्लूकोसिनोलेट कार्बनिक सल्फर यौगिकों का समूह है। इन यौगिकों का हाइड्रोलायटिक उत्पाद जैविक क्रियाशील विशेषकर एराईल्स एवं इण्डोल उत्पाद कैंसर रोधी होते हैं। ब्रेसीकेसी कुल की सब्जियाँ जैसे– पत्तागोभी, केल, ब्रोकोली, फूलगोभी, ब्रुसेल्स स्प्राउट्स आदि मानव आहार में ग्लूकोसिनोलेट की प्रमुख स्रोत हैं।

फोलिक एसीड

फोलिक एसीड जल विलेय विटामिन बी–9 है इसको फोलेट भी कहते हैं। मानव फोलेट को संश्लेषित नही कर सकता है अतः इसको आहार के माध्यम से दिया जाता है। महिलायें जिनकी आयु 45 से कम हो या जो गर्भवती हो उनको फोलेट की जरूरत अधिक होती है। शराब के सेवन करने वाले लोगों को फोलेट की जरूरत अधिक होती है। शराब के सेवन से फोलेट की कमी हो जाती है। ऐसे लोग जो यकृत या किडनी बीमारी से ग्रसित हैं, उनको फोलिक एसीड देने से लाभ होता है।

फोलिक एसीड का मुख्य स्रोत पालक, ब्रोकोली, केल, ब्रुसेल्स स्प्राउट्स, पत्तागोभी, सेम वर्गीय सब्जियाँ एवं अन्य दाल वर्गीय सब्जियाँ हैं। गर्भावस्था में इसकी कमी से समय पूर्व प्रसव हो जाता है। बच्चों का वजन कम होता है, भ्रूण की वृद्धि रूक जाती है तथा रीढ़ की हड्डी और मस्तिष्क का विकास अपूर्ण होता है।

इण्डोल्स

ब्रेसीकेसी कुल की सब्जियों जैसे पत्तागोभी, ब्रोकोली, फूलगोभी, केल आदि में इण्डोल्स पाया जाता है। इनमें कैन्सर रोधी कारकों एवं अन्य हानिकारक तत्वों के प्रभाव कम करने का गुण पाया जाता है।

आइसोथायोसाइनेट

आइसोथायोसाइनेट ब्रेसीकेसी कुल की सब्जियों में जैसे– वाटर क्रेस, ब्रोकोली, शलजम एवं मूली पाया जाता है। आइसोथायोसाइनेट विषाक्त तत्वों को दूर करने वाले एन्जाइम को सक्रिय करने एवं कैन्सर फेज 1 को दूर करने वाले एन्जाइम को सक्रिय करने में सहायक होता है।यह ट्यूमरोजेनोसिस को भी रोकता है।

सब्जियों के उपयोग एवं बीमारियों के जोखिम के बीच सम्बन्ध

सब्जियों के पोषण में पोषक तत्वों का उपलब्धता होना सर्वमान्य है जबकि बीमारियों से बचाव में सब्जियों के महत्व पर अनिश्चितता है। हाइपरटेन्सन, कोरीनरी हार्ट डिजीज एवं हृदयाधात के जोखिम से बचाव के लिए आहार में सब्जियों का समावेश आवश्यक है। सब्जियों के उपयोग से कैंसर से बचाव के सम्भावित साक्ष्य भी हैं। भोजन में सब्जियों का सेवन अधिक करने से वजन नहीं बढ़ता है। मधुमेह–2 का सबसे अधिक जोखिम मोटे लोगों को होता है। अध्ययन के आकड़ों में पाया गया कि आहार में संतुलित मात्रा में सब्जियों के प्रयोग से आँख सम्बन्धी बीमारियों के होने का जोखिम कम होता है। सब्जियों की संतुलित मात्रा लेने से फेफड़े सम्बन्धित बीमारियाँ, अस्थमा एवं फेफड़ें की बीमारी, सी.ओ.पी.डी. से बचाव होता है।

- **सब्जियाँ एवं मोटापा**

वर्तमान समय में मोटापा एक गम्भीर समस्या है जो दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। जब कैलोरी अधिक ली जाती है एवं खर्च कम की जाती है, तो मोटापा बढ़ता है। सब्जियों में अन्य खाद्य पदार्थों की अपेक्षा कैलोरी कम होती है, इसलिए अधिक मात्रा में सेवन करने से भी कैलोरी की मात्रा अन्य खाद्य पदार्थ की तुलना में कम होती है। अभी तक ये नही पता है कि सब्जियों एवं फलों में कौन–कौन जैव क्रियाशील यौगिक हैं जो भूख को बढ़ाता है एवं संतृप्त करता है। अध्ययन में यह पाया गया कि मानव आहार में सब्जियों का उपयोग बढ़ाने से वजन कम होता है जबकि अन्य अध्ययन में पाया गया है कि सब्जियों एवं फलों के उपयोग बढ़ाने से वजन स्थिर हो जाता है। सम्भावित साक्ष्य यह भी है कि अकेले सब्जियों का उपयोग बढ़ाने से वजन कम नही होता है। यदि सब्जियों का उपयोग बढ़ाया जाये एवं अधिक वसा एवं कम कैलोरी वाले भोजन को लिया जाये, तो वजन कम होता है।

- **मधुमेह टाइप–2 (मेलीटस)**

टाइप–2 मधुमेह प्रचलित एवं खर्चीली दीर्घकालिक बीमारी है। अर्न्तर्राष्ट्रीय मधुमेह फेडरेशन द्वारा जारी रिपोर्ट में 20–79 वर्ष के औरतों में 6.4 प्रतिशत मधुमेह पाया गया जो विभिन्न देशों में अलग–अलग है (3.0 प्रतिशत अफ्रीका, 6.9 प्रतिशत यूरोप एवं 10.2 प्रतिशत उत्तरी अमेरिका)। टाइप–2 मधुमेह का कारण आनुवांशिक एवं खानपान की पारस्परिक क्रिया का फल है। टाइप–2 मधुमेह होने का जोखिम सब्जियों के सेवन से प्रभावित नही होता है बल्कि सब्जियाँ एवं फल के सेवन से इसका बचाव होता है एवं मोटापा व वजन बढ़ने का जोखिम कम होता है।

- **सब्जियाँ एवं उच्च रक्त चाप**

सार्वजनिक नीति के अनुसार उच्च रक्तचाप मानव में सबसे महत्वपूर्ण बीमारी है। वैश्विक स्तर पर 26 प्रतिशत प्रौढ़ उच्च रक्त चाप से पीड़ित हैं। एक

अनुमान के अनुसार सन् 2025 तक इनकी संख्या बढ़कर 29 प्रतिशत हो जायेगी। हृदयाघात एवं वृक्क कैंसर का जोखिम उक्त रक्त चाप से बढ़ जाता है इसके लिए जीवन भर मेडीटेशन की आवश्यकता होती है। सामान्य से थोड़ा कम रक्त चाप होने पर दिल सम्बन्धी बीमारियों की सम्भावना कम हो जाती है। अमेरिकन हर्ट, लंग एवं ब्लड संस्थान ने वर्ष 2003 में बताया था कि उच्च रक्त चाप से बचाव के लिए स्वास्थ बढ़ाने वाली जीवन शैली अपनाना, वजन कम करना, भोजन में सोडियम एवं एल्कोहल की मात्रा कम करना एवं व्यायाम करना आवश्यक है। यूरोपियन सोसायटी आफ हाइपरटेन्सन द्वारा बताया गया कि आहार में सब्जियों एवं फलों का नियमित सेवन करने से रक्त चाप कम होता है। शाकाहारी लोगों में कम रक्त चापकी समस्या प्रायः नही पाया जाता है एवं सामान्य आहार के स्थान पर शाकाहारी आहार लेने पर रक्त चाप में कमी आती है।

सब्जियाँ एवं कोरोनरी हर्ट डिजीज (सी.एच.डी.) मानव में कोरोनरी हर्ट बीमारी अर्टरियोस्क्लोसिस का सबसे महत्वपूर्ण कारण है जो कार्डियोवैसकुलर बीमारी समूह के अन्तर्गत आता है। विश्व में समय पूर्व मृत्यु का सबसे बड़ा कारण सी.एच.डी. है। विश्व में सन् 2008 में कार्डियोवैसकुलर बीमारी के कारण 17 मिलियन लोगों की मृत्यु हुई। सब्जियों के दैनिक आहार में सेवन एवं सी.एच.डी. बीमारी पर किये गये अध्ययनों में पाया गया कि सब्जियों को आहार में स्थान देने से सी.एच.डी. होने का जोखिम कम होता है।

- **सब्जियाँ एवं कैन्सर**

कैन्सर एक महत्वपूर्ण दीर्घकालिक बीमारी है। वैश्विक स्तर पर खानपान के आदतों के कारण यह बीमारी प्रत्येक उम्र के लोगों में बढ़ रही है। बीमारी का लक्षण गुणसूत्रों में परिवर्तन होता है। कैन्सर होने के कारणों में आयु, तम्बाकू, धूम्रपान, शराब, अधिक वजन, हारमोन सम्बन्धी कारक, शारीरिक क्रिया एवं दैनिक आहार आदि सम्मिलित हैं। डब्लू. सी.आर.एफ. की रिपोर्ट वर्ष 1977 के अनुसार दैनिक आहार में सब्जियों के सेवन से कैन्सर से बचाव होता है।

जैविक खेती ही है हल
आज नहीं तो कल
जैविक खेती रोग भगाए!
जैविक खेती ग्लोबल वार्मिंग घटाए!!
जैविक खेती जी डी पी बढ़ाए!!!
आज नहीं तो कल, जैविक खेती ही है हल

डॉ. शिव दर्शन मलिक

मूली के बीज उत्पादन को व्यवसाय के रूप में अपनायें

बी.के. सिंह एवं सौरभ सिंह

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

मूली (रैफनस सटाइवस, गुणसूत्र संख्या त्र 18), ब्रेसीकेसी परिवार की एक महत्वपूर्ण सलाद वाली सब्जी है। इस फसल से सम्बन्धित अन्य प्रजातियाँ जैसे–रैफनस रैफनिस्ट्रम, रैफनस लैंक्नड्रा एवं रैफनस मारिटिमस प्रकृति में उपलब्ध हैं। मूली सामान्यतः शीतकालीन फसल है लेकिन तापमान/आर्द्रता अवरोधी किस्मों के विकास तथा जलवायु विभिन्नता के कारण भारत में इसकी खेती लगभग वर्ष भर की जाती है। मूली को ज्यादातर हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, पंजाब, असम, हिमाचल प्रदेश और गुजरात राज्यों में उगाया जाता हैं। मूली में सल्फरयुक्त जैव–रसायन ग्लूकोसाइनोलेट की मात्रा अन्य सब्जियों की तुलना में अधिक पायी जाती है जिसमें कैंसररोधी क्षमता होती है। सफेद मूली की अपेक्षा लाल मूली ज्यादा पौष्टिक होती है क्योंकि इसमें विटामिन–सी की मात्रा लगभग 25 प्रतिशत ज्यादा एवं प्रति आक्सीकारक क्षमता 50–100 प्रतिशत ज्यादा होती है।

जलवायु के अनुसार मूली की किस्मों को दो भागों में बाँटा गया है:

I. उष्णकटिबंधीय किस्में (लम्बी व मध्यम जड़वाली, एशियाटिक प्रकार): इन किस्मों का बीज उत्पादन मैदानी भागों में किया जाता है। इस समूह की कुछ किस्में इस प्रकार हैं:

- **काशी श्वेता:** जड़ें लम्बी, 35–40 दिन में तैयार, बुआई सितम्बर से फरवरी तक।
- **काशी हंस:** जड़ें लम्बी, 35–40 दिन में तैयार, बुआई अक्टूबर से नवम्बर तक।
- **काशी मूली–40:** जड़ें 25–30 सेमी. लम्बी, 40–45 दिन में तैयार, बुआई सितम्बर से मार्च तक।
- **काशी आर्द्रः** जड़ें लम्बी, 35–40 दिन में तैयार, अक्टूबर से नवम्बर तक बुआई।
- **काशी लोहितः** जड़ें लम्बी एवं लाल रंग की, 35–40 दिन में तैयार, बुआई अक्टूबर से नवम्बर तक।
- **पूसा चेतकी:** गर्मी के लिए उपयुक्त, 30–35 दिन में तैयार, बुआई अप्रैल से अगस्त तक।
- **जापानीज व्हाइटः** 35–40 दिन में तैयार, बुआई अक्टूबर से दिसम्बर तक।

II. शीतोष्णकटिबंधीय किस्म (छोटी जड़वाली यूरोपियन प्रकार) : इन किस्मों का बीज उत्पादन पहाड़ी क्षेत्रों में (ठण्डे जलवायु) में ही होता है जैसे–व्हाइट आइसिकिल, रैपिड रेड व्हाइट टिप्ड, पूसा मृदुला आदि।

जलवायु

मूली मुख्यतः ठण्डे मौसम की फसल है और हल्की/ठण्डी जलवायु में सबसे अच्छी होती है उष्णकटिबंधीय किस्में, शीतोष्णकटिबंधीय किस्मों की तुलना में उच्च तापमान को ज्यादा सहन करती हैं। प्रारम्भिक अवस्था में जड़ के विकास के लिए 20–25 डिग्री सेल्शियस और बाद में सर्वोत्तम स्वाद के लिए 10–18 डिग्री सेल्शियस की आवश्यकता पड़ती है। बीज उत्पादन के लिए मध्यम तापमान तथा शुष्क मौसम उत्तम होता है।

मृदा एवं खेत की तैयारी

इसकी खेती के लिए कार्बनिक पदार्थयुक्त बलुई दोमट या दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। बुआई के समय मिट्टी गहरी, हल्की और भुरभुरी होनी चाहिए।

उर्वरक एवं खाद

गोबर की खाद 10–15 टन/हे., नाइट्रोजन 60 किग्रा./हे., फास्फोरस 40 किग्रा./हे., पोटाश 40

किग्रा./हे. दिया जाता है। इनमें से नाइट्रोजन की आधी मात्रा खेत तैयार करते समय मिट्टी में मिला देते हैं। शेष आधी मात्रा जड़ बनने के समय। सघन मूली उत्पादन वाले क्षेत्रों में 10–12 किग्रा. बोरेक्स फूल बनते समय तथा 30–40 किग्रा./हे. फास्फोरस एवम् पोटाश का प्रयोग बीज उत्पादन के लिए आवश्यक होता है।

बीज की मात्रा, बुआई व पौध विरलीकरण

मूली का बीज दर 8–10 किग्रा./हेक्टेयर है जिनकी बुआई 40–50 सेमी. दूरी पर बनी मेड़ों पर लगभग 1.5 सेमी. गहराई पर करें और अंकुरण के पश्चात् 10–12 दिन पुरानी पौधों की आपस में 5–6 सेमी. की दूरी बनाये रखने के लिए विरलीकरण की जानी चाहिए।

बुआई का समय

बीज बुआई का समय, किस्म एवं स्थान पर निर्भर करता है। मैदानी भागों में एशियाटिक प्रकार के किस्मों की बुआई 15–25 अक्टूबर तक तथा पहाड़ी क्षेत्रों में यूरोपियन किस्मों को 25 सितम्बर से मध्य अक्टूबर और मध्य मार्च में करते हैं।

जड़ निष्कासन एवं स्टैक्लिंग स्थापन

किस्म एवं समयावधि के अनुसार ही जड़ को निकालते हैं तथा खुदाई से पहले हल्की सिंचाई करें जिससे जड़ की खुदाई आसानी से हो जाये। बीज उत्पादन के लिए 55–60 दिन पुरानी जड़ों को निकालते हैं। तदोपरान्त छँटाई करके स्टेक्लिंग तैयार करते हैं।

पुष्प संरचना

- मूली का पुष्पक्रम अग्रभाग में होता है।
- इनके फूल उभयलिंगी तथा पखुड़ियाँ बैंगनी शिराओं के साथ, सफेद/गुलाबी रंग के होते हैं।
- बाह्य दलपुंज संख्या में चार और सीधे होते हैं।
- पंखुड़ियाँ भी चार होती है तथा बहुदलीय, नियमित, प्रत्येक पंखुड़ी अलग–अलग रहती है।
- चार बाह्यदल तथा चार पंखुड़ियाँ एक दूसरे के विपरीत वर्गाकार में होती है।
- पुंकेसर छः (चार बड़े एवं दो छोटे) होते हैं।
- इसके फली को सिलिकुआ कहते हैं, फली 3.7 सेमी. लम्बा और 1.5 सेमी. व्यास का होता है तथा दो पंक्तियों के साथ 6–12 बीज होते हैं।
- मूली का बीज गोलाकार 3 मिमी. व्यास, भ्रूण घुमावदार, सेप्टम से जुड़ा होता है और 100 बीजों का भार 1.0–1.2 ग्राम का होता है। परिपक्व हुए बीज का रंग भूरा होता है।
- मूली एक लम्बे–दिन की फसल है और वसन्त के शुरू होने पर पुष्प डंठल तथा बीज उत्पादित होता है।
- मूली में द्विलिंगी प्रकार के फूल होते है लेकिन इसमें स्व–असंगितता के कारण 70–100 प्रतिशत तक पर–परागण होता है।
- मूली में पर–परागण साधारणतया मधुमक्खी, जंगली मधुमक्खी और जंगली फूलमक्खी द्वारा होता है।
- मधुमक्खी तथा अन्य कीट मूली के फूलों पर मड़राते रहते हैं क्योंकि उनके फूलों में नेक्टर उपस्थित होता है।
- फूल का खुलना सुबह 8:00 बजे से प्रारम्भ होता है और 11:30 बजे तक खुला रहता है। यह मौसम के उपर निर्भर करता है।
- परागकोष का प्रस्फूटन लम्बवत होता है।

- फूल खिलने के दो दिन पूर्व वर्तिकाग्र ग्रहणशील होता है, जबकि पूर्ण विकसित फूल के आने पर ग्रहणशीलता अधिकतम होता है तथा यह कम से कम चार दिनों तक जारी रहता है।

अलगाव दूरी

मूली मुख्यरूप से मधुमक्खियों द्वारा पर–परागित सब्जी फसल है अतः गुणयुक्त बीज उत्पादन के लिए भिन्न किस्मों को एक निश्चित दूरी पर रोपाई करते हैं। आधारीय बीज उत्पादन के लिए कम से कम 1600 मीटर की अलगाव दूरी रखनी चाहिए और संकर बीज की पैतृक वंशावलियों का बीज और प्रमाणित बीज उत्पादन के लिए लगभग 1000 मीटर की दूरी होना चाहिए।

सिंचाई

बीज बुआई तथा जड़ों की रोपाई के तत्काल बाद सिंचाई करना चाहिए जिससे की बीज का जमाव एवं जड़ों का विकास अच्छा हो। अगली सिंचाई जमीन में उपलब्ध नमी के अनुसार 10–15 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए।

बीज उत्पादन की विधि

मूली में बीज उत्पादन बीज से बीज और जड़ से बीज दोनों ही विधि द्वारा किया जाता है। सामान्यतः जड़–बीज उत्पादन विधि बड़े पैमाने पर अपनाया जाता है।

I. **जड़ से बीज उत्पादन विधि :** जड़ से बीज उत्पादन विधि में जब जड़ें पूरी तरह से परिपक्व हो जाती हैं (बुआई के 55–60 दिनों के पश्चात्) तब जड़ों को उखाड़ा जाता है। सही प्रकार के जड़ों को चुना जाता है और उचित जड़ एवं पत्ती काट देने के बाद उन्हे अच्छी तरह से तैयार खेत में रोपित किया जाता है। आमतौर पर एक चौथाई जड़ और 5–8 सेमी. पत्ती को काटा जाता है। जड़ों का चयन, पत्तियों के प्रकार, जड़ों के रंग, आकार एवम् मोटाई के आधार पर किया जाता है।

II. **बीज से बीज उत्पादन विधि :** इस विधि द्वारा बीज उत्पादन बहुत ही कम किया जाता है क्योंकि इस विधि में जड़ का चुनाव न होने के कारण उत्पादित बीज की गुणवत्ता अच्छी नहीं होती है।

अवांछनीय पौधों को निकालना (रोगिंग)

मूलीके बीज उत्पादन में अवांछनीय पौधों का निस्कासन (रोगिंग) चार अवस्थाओं पर करते हैं:

- **वानस्पतिक अवस्था–** पत्ती का प्रकार तथा पर्णवृत्त/पत्ती का रंग देखकर।
- **स्टेक्लिंग/जड़ तैयार करना–** पत्ती का प्रकार, जड़ का आकार, रंग, मज्जा (पिथ) बनना इत्यादि को देखकर।
- **पुष्प–डंठल का निकलना (बोल्टिंग)–** अनियमित बोल्टिंग वाले पौधे को निकालते हैं।
- **पुष्पन की अवस्था–** फूलों का रंग देखकर ।

सहारा देना

पौध को सहारा प्रदान करने से पुष्पक्रमों का अच्छा विकास, अधिक/सुगम परागण, रोगों की न्यूनता, अधिक बीज विकास/गुणवत्ता तथा उत्पादन में 15–20 प्रतिशत अधिक होता है।

परागण प्रबंधन

मूली में मधुमक्खी एक कुशल एवं महत्वपूर्ण परागकर्ता है और इसमें 70–100 प्रतिशत पर–परागण होता है। मधुमक्खियों द्वारा परागण को बढ़ाने के लिए खेतों में मधुमक्खियों की पर्याप्त संख्या होना आवश्यक है। इसलिए एक हेक्टेयर क्षेत्र में 15–18 मधुमक्खी के बक्से या अलगाव जाली में प्रति 100 मी^{2} क्षेत्र में एक मधुक्खी बक्सा को रखते हैं। इस प्रकार परागण से बीज की उपज और इसकी गुणवत्ता बढ़ जाती है।

कटाई, मड़ाई, भण्डारण एवं बीज उपज

मूली की फलियाँ 60–75 दिनों में पककर तैयार हो जाती हैं। नर बन्ध्य आधारित संकर बीजों के

मूली में पुष्पन एवं परागण

व्यावसायिक उत्पादन में, जैसे ही फली बनाना खत्म होता है तब बीज को मिलावट से बचाने के लिए नर पौधों को निकाल दिया जाता है। जब फली के डंठल के आधार पीले/भूरे रंग के हो जाते हैं तब अधिकांश रूप से डंठल को काटकर सूखने के लिए ढेर में रख दिया जाता है। डंठल को बहुत नीचे से नहीं काटना चाहिए अन्यथा मोल्ड विकसित होते हैं। इसके बाद बीज को धीरे–धीरे साफ करना चाहिए तथा ठीक से श्रेणीकरण (ग्रेड) करके पुनः इसे कम से कम 5 प्रतिशत नमी तक सुखाते एवं तदोपरांत भण्डारित करते हैं। बीज की पैदावार शीतोष्णकटिबंधीय किस्मों द्वारा 500–800 किग्रा./हेक्टेयर और उष्णकटिबंधीय किस्मों द्वारा 600–1000 किग्रा./हेक्टेयर होती है।

मूली का स्वस्थ्य बीज

फसल सुरक्षा

(अ) रोग एवं उनका प्रबंधन

- **खोखली जड़**

बुआई के 16–30 दिनों के बाद अधिक तापमान के कारण मूली के मध्य में विभज्योतक ऊतक का बनना रूक जाता है जिससे अन्तःकोशिकीय स्थान का विकास हो जाता है या मृदुतक से भरा होता है जो खोखले जड़ के बनने में सहायक होता है। इसके रोकथाम के लिए खेत में उचित नमी बनाये रखना चाहिए, गर्मियों में संवेदनशील किस्मों को नहीं लगाना चाहिए तथा बोरेक्स 0.3 प्रतिशत का 25–40 दिनों के बाद छिड़काव करना चाहिए।

- **श्वेत रतुआ**

पत्तियों, तनों तथा पुष्प तनों पर सफेद रंग के अनियमित गोलाकार धब्बें दिखाई पड़ते हैं। पौधे व तना के अधिक संक्रमण से रोगग्रस्त भाग फूलकर विरूपित हो जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए खड़ी फसल में मैंकोजेब, जिनेब या रिडोमिल एम. जेड–72 की 2.5 किग्रा. रसायन का एक हजार लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

- **अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा**

बीज के अंकुरण के तुरन्त बाद पौधे के तने पर छोटी छोटी काले रंग की चित्तियाँ बनती हैं जो बाद में बढ़कर पौधों का आर्द्र विगलन कर देती हैं। रोगी पौधों की बढ़वार रूक जाती है व बड़े पौधों की पत्तियों पर गहरे भूरे या काले रंग के धब्बे दिखाई पड़ते हैं। धब्बों के चारों तरफ पीला क्षेत्र बन जाता है। पुराने धब्बों के बीच में गोल छल्ले जैसे निशान होते हैं। इसके नियंत्रण के लिए थीरम 2.5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से बीज उपचारित करें। खड़ी फसल को जिनेब 2.5 किग्रा. या कॉपर आक्सीक्लोराइड 3 किग्रा. की दर से 700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

(ब) कीट एवं उनका प्रबंधन

- **माहूँ**

मूली में लगने वाला माहूँ एक प्रमुख कीट है। यह रोपाई और परिपक्व फसल, दोनों पर इनका प्रकोप होता है। वातावरण में अत्यधिक नमी होने पर इनका प्रकोप अधिक होता है। ये पौधों के सभी भाग

को हानि पहुँचाते हैं जिससे पौधे की वृद्धि रूक जाती है। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोरोप्रिड या थायोमेथाक्जाम को 1.5–2.5 मिली./लीटर पानी में घोल बनाकर खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए।

- **सफेद मक्खी**

सफेद मक्खी वानस्पतिक एवं फूल दोनों ही अवस्था में फसल को नुकसान पहुँचाती हैं। धूंसर रंग का लार्वा पत्तियों और फलों दोनों को खाते हैं। इसके रोकथाम के लिए थायोमेथाक्जाम की 2 ग्राम/लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

पर, जाने क्यों, नियम एक अद्भूत जग में चलता है,
भोगी सुख भोगता, तपस्वी और अधिक जलता है।

हरियाली है जहाँ, जलद भी उसी खण्ड के वासी,
मरू की भूमि मगर, रह जाती है प्यासी की प्यासी।

और, वीर जो किसी प्रतिज्ञा पर आकर अड़ता है,
सचमुच, उसके लिए उसे सब–कुछ देना पड़ता है।

नहीं सदा भीषिका दौड़ती द्वार पाप का पाकर,
दुःख भोगता कभी पुण्य को भी मनुष्य अपनाकर।

रामधारी सिंह 'दिनकर'

कम लागत पर सब्जियों का संकर बीज उत्पादन

राजेश कुमार, रामेश्वर सिंह एवं पी.एम. सिंह

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

21वीं सदी की इन्द्रधनुष क्रांति में सब्जी उत्पादन में गुणवत्तायुक्त बीज की माँग बढ़ रही है। वैश्विक स्तर पर सब्जी बीज उद्योग में उत्पादन, पैकेजिंग, रखरखाव, यातायात, विपणन एवं विज्ञापन के क्षेत्र में व्यापकता ने सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है। भारत में कुल औद्यानिक उत्पादन का 59.58 प्रतिशत सब्जियों का है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड के 2018–19 के आंकड़ों के अनुसार देश में सब्जियों की 10.43 मिलियन हे. क्षेत्रफल से कुल 187.47 मिलियन टन उत्पादन प्राप्त होता है। इस समय प्रति व्यक्ति प्रतिदिन सब्जी की उपलब्धता 240 ग्राम है। सब्जी की उत्पादकता 17.97 टन/हे. प्राप्त है। सब्जियाँ प्रक्षेत्र से उपभोक्ता तक पहुँचने में लगभग 30 प्रतिशत खराब हो जाती हैं। सब्जी की उपलब्धता बढ़ने का कारण अच्छी किस्मों/संकरों का विकास एवं उनका गुणवत्तायुक्त बीज की उपलब्धता, फसल सुरक्षा तकनीकों एवं उत्पादन तकनीकी पर किये गये शोध है। सब्जियाँ अन्य फसलों की तुलना में कम समय में प्रति इकाई क्षेत्र से अधिक उत्पादन देती हैं लेकिन सब्जियों में प्रति इकाई क्षेत्र की उत्पादकता बढ़ाने में संकर किस्मों का बहुत महत्वपूर्ण योगदान है। किसान संकर किस्मों को वरीयता देते हैं क्योंकि इनमें उच्च समानता, रोग/कीट प्रतिरोधिता एवं अधिक स्वजीवन पाया जाता है। भारत में सब्जियों की कम उत्पादकता का कारण संकर किस्मों की कमी तथा उपलब्ध संकर किस्मों के गुणवत्तायुक्त बीज की उपलब्धता में कमी एवं संकर किस्मों के बीज का उच्च मूल्य है। इसलिए संकर बीजों की लागत को घटाना, बीज उद्योग एवं किसानों के लिए आवश्यक है।

विशुद्ध जनकों द्वारा प्राप्त संकर बीज के निम्नलिखित लाभ हैं:

1. मुक्त परागित किस्मों की तुलना में प्रति इकाई क्षेत्र अधिक उत्पादन
2. आकार एवं बनावट में समानता
3. जैविक एवं अजैविक तनाव के प्रति सहनशीलता
4. रोजगार के अधिक अवसर
5. अधिक स्वजीवन
6. अधिक मूल्य में विपणन

संकर बीज उत्पादन की विधियाँ

- **नर अंग का हस्त विपुंसीकरण एवं हाथ द्वारा परागण**

इस प्रक्रिया में हाथ द्वारा पुष्प से नर अंग को निकाल दिया जाता है एवं वाँछित पितृ का परागकण वर्तिकाग्र पर लगाकर परागण किया जाता है। इस विधि में लागत अधिक आती है। इसलिए इसका प्रयोग केवल ऐसी फसलों में किया जाता है जिसमें प्रति परागण अधिक बीज प्राप्त होता है एवं प्रति हेक्टेयर बीज दर कम होती है जैसे–टमाटर, बैंगन एवं कद्दू वर्गीय सब्जियाँ।

- **नर फूल कलिका का निष्कासन एवं मादा पुष्प का हस्त परागण**

मादा जनक लाइन के नर फूलों को खिलने से एक दिन पहले नियमित रूप से तोड़ (पिन्च) दिया जाता है। इसके बाद मादा फूलों का हस्त परागण किया जाता है। नर फूल कालिका की तुड़ाई में अधिक श्रम की आवश्यकता होती है, इसलिए मादा फूल को खिलने से पहले वटर पेपर के लिफाफा (बैग) से ढक देते हैं एवं उसके एक दिन बाद लिफाफा हटाकर हस्त परागण करते हैं तथा पुनः लिफाफा बैग लगा देते हैं। इस तकनीकी का प्रयोग कद्दू वर्गीय सब्जियों जैसे– लौकी, कुम्हड़ा, करेला आदि में किया जाता है। इसके अतिरिक्त यदि 3:1 के अनुपात में मादा और नर जनक लगाये जाये तथा

मादा जनक से सभी नर कलिकायें तोड़ दी जाये। तत्पश्चात् नर जनक के फूलों से स्वतः मधुमक्खियों द्वारा परागकण से मादा जनक में परागण करते हैं। इस प्रकार कद्दूवर्गीय सब्जियों में संकर बीज उत्पादन किया जा सकता है।

- **जायांगी लिंग (गाइनोसेयिस सेक्स फार्म) का प्रयोग**

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र केटरायन, हिमाचल प्रदेश (खीरा की जायांगी–पूसा संयोग) एवं पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना (पंजाब) में खरबूजा (एम.एच. –10) द्वारा इस विधि का प्रयोग करके बीज उत्पादन (मादा एवं नर जनक लाइनों को 3:1 के अनुपात लगाकर) किया जाता है। मादा जनक लाइन में केवल मादा फूल आते हैं एवं परागण कीट (मधुमक्खी) द्वारा कराया जाता है। अच्छे बीज उत्पादन के लिए मधुमक्खी की 1–2 कालोनी बीज उत्पादन प्रक्षेत्र प्रखण्ड (प्लाट) में लगाया जाता है। नर जनक का संरक्षण स्वपरागण द्वारा किया जाता है। मादा जनक लाइन का संरक्षण सिल्वर नाइट्रेट 200 पी.पी.एम. का छिड़काव नर फूल पैदा कर स्व परागण द्वारा पितृ अनुरक्षण किया जाता है।

- **पादप वृद्धि नियामकों के प्रयोग द्वारा संकर बीज उत्पादन**

पादप वृद्धि नियामकों के प्रयोग से संकर बीज उत्पादन कद्दूवर्गीय सब्जियों में किया जाता है। कुछ विशिष्ट रसायन होते हैं जो नर या मादा फूल पैदा करने में सहायक होते हैं। लौकी, कुम्हड़ा एवं छप्पन कद्दू में 2–4 पत्ती की अवस्था में एवं फूल आने के समय इथ्रेल (2–क्लोरो–ईथाइल–फास्फोनिक एसीड) 200–300 पी.पी.एम. के छिड़काव से शुरू की कुछ गांठों पर मादा फूल आते हैं। इस विधि में नर जनक की लाइन भी एकान्तरिक पंक्ति में लगायी जाती है एवं मुक्त कीट परागण कराया जाता है। शुरू की मादा लाइन की 4–5 गांठों पर लगे फल संकर बीज के लिए पर्याप्त हो जाते हैं। छप्पन कद्दू में पूर्णतया नर फूल को रोकने के लिए ईथ्रेल का 400–500 पी. पी.एम. का छिड़काव दो बार करने से संकर बीज का बनाना आसान हो जाता है।

- **आनुवांशिक तकनीकों से सब्जियों का संकर बीज उत्पादन**

नर बन्ध्यता

सामान्यतया उभयलिंगी पौधों में नर बंध्य परागकण का बनना नर बन्ध्यता कहलाता है। संकर बीजों का महत्व दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है इसलिए नर बंध्यता का महत्व ऐसी सब्जियों में बढ़ गया है जिसमें छोटे फूल आते हैं एवं हस्त विपुसंन अधिक श्रम एवं उनकी कुशलता आवश्यक होती है। सर्वप्रथम वर्ष 1936 में जोन्स एवं इम्सवेलर ने प्याज में नर बंध्यता की पहचान किया, इसके आनुवांशिकी एवं संकर बीज उत्पादन में प्रयोग का अध्ययन जोन्स एवं क्लार्क द्वारा वर्ष 1943 द्वारा किया गया। इसके बाद बहुत सी सब्जी फसलों जैसे–टमाटर, मिर्च, शिमला मिर्च, गाजर, पत्तागोभी, फूलगोभी, मूली, खरबूजा आदि में नर बंध्यता का प्रयोग संकर बीज बनाने में किया जा रहा है।

नर बंध्यता का वर्गीकरण एवं संकर बीज उत्पादन में उनका उपयोग

कौल (1980) द्वारा नर बंध्यता को दो मुख्य समूह में वर्गीकृत किया गया हैः आनुवांशिक एवं कोशिकाद्रव्यी (प्रेरित) नर बंध्यता। व्यवसायिक रूप से सब्जियों के संकर बीज उत्पादन में प्रयोग की जाने वाली नर बंध्यता इस प्रकार हैः

1. आनुवांशिक नर बंध्यता

आनुवांशिक नर बंध्यता सामान्यतया अप्रभावी न्यूक्लीयर जीन से प्रकट होती है। टमाटर, मिर्च, बैंगन, खरबूजा, भिण्डी तथा कुछ अन्य सब्जियों में इस तरह की नर बंध्यता की सूचना उपलब्ध है। सामान्यतया इसका प्रयोग होमोजाइगस रेसेसिव जीन्स से प्रतीप संकरण द्वारा किया जाता है। आनुवांशिक नर बंध्यता का अनुरक्षण हेटेरोजाइगस

अवस्था में किया जाता है जिसमें 50 प्रतिशत नर तथा 50 प्रतिशत मादा पौधों होते हैं। संकर बीज उत्पादन के लिये 50 प्रतिशत नर उर्वर पौधे फूल खिलने से पहले पहचान कर उखाड़ दिये जाते हैं। शेष पौधों पर संकर बीज तैयार किया जाता है। इस तरह के संकर बीज उत्पादन में उर्वर एवं बंध्य पौधों की पहचान बहुत महत्वपूर्ण है।

आनुवांशिक नर बंध्यता के प्रयोग से संकर बीज उत्पादन की योजना

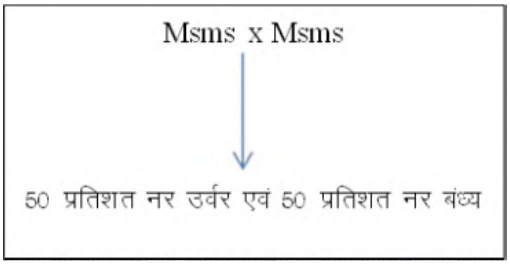

+	X	●	X	●	X
+	●	X	●	X	●
+	X	●	X	●	X
+	●	X	●	X	●
+	X	●	X	●	X
+	●	X	●	X	●

+:(नर जनक)

X:मादा जनक लाइन में नर उर्वर जिनको पहचान कर उखाड़ना होगा।

●:नर बंध्य पौधे जिससे संकर बीज प्राप्त किया जायेगा।

2. कोशिकाद्रव्यी नर बंध्यता

इस पद्धति में कोशिकाद्रव्य ही नर बंध्यता को सुनिश्चित करता है क्योंकि युग्मनज का कोशिकाद्रव्य, अण्ड कोशिका से आता है। इस तरह के नर बंध्य पौधों की संतति नर बंध्य ही होती है। इस तरह की नर बंध्यता केवल उन्ही सब्जी फसलों के लिए उपयोगी है जिसका वानस्पतिक भाग खाया जाता है जैसे– गाजर, मूली, पत्तागोभी आदि।

3. कोशिकाद्रव्यी आनुवांशिक नर बंध्यता

कोशिकाद्रव्यीआनुवांशिक नर बंध्यता कोशिका द्रव्य एवं न्यूक्लियर जीन्स के पास्परिक प्रभाव से होती है। इस तरह की नर बंध्यता में तीन प्रकार के प्रभेदों का प्रयोग किया जाता है जैसे ए लाइन (नर बंध्य), बी लाइन (मेन्टेनर) एवं सी लाईन (रिस्टोरर नर जनक)। इस तरह की नर बंध्यता के लिए प्रभावी रिस्टोरर आर एफ (*Rf*) जीन (न्यूक्लीयर जीनोम में स्थित रहता है) जो परागकण की उर्वरता के लिए जिम्मेदार होता हैं। उर्वरता अनुरक्षण (रिस्टोरर) जीन आर एफ/आर एफ (*Rf/ Rf*) प्रजातियों की निश्चित प्रभेद में पायी जाती है एवं सम्बन्धित प्रजातियों में इसका स्थानान्तरण प्रतीप संकरण द्वारा किया जाता है। इस तरह की नर बंध्यता का उपयोग गाजर, प्याज, चुकन्दर, मिर्च, शिमला मिर्च आदि में किया जाता है। भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में इस तरह की पद्धति का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है एवं इस प्रकार की नर बंध्यता से मिर्च की तीन उत्कृष्ट संकर किस्में जैसे– काशी सुर्ख, काशी रत्ना एवं काशी तेज विकसित की गयी हैं।

नर बंध्य संरक्षण प्रखण्ड

(+) नर जनक

● नर बंध्य (मादा) जनक

संकर बीज उत्पादन प्रखण्ड

+	●	●	●	+	●	●	●	+
+	●	●	●	+	●	●	●	+
+	●	●	●	+	●	●	●	+
+	●	●	●	+	●	●	●	+
+	●	●	●	+	●	●	●	+
+	●	●	●	+	●	●	●	+

4. स्व–अनिषेच्यता

स्व–अनिषेच्यता में किसी पौधे का उर्वर परागकण स्व–निषेचन के बाद बीज बनाने में असक्षम होता है। इसके अन्तर्गत परागकण के अंकुरण, परागकण कलिका (पालेन ट्यूब) वृद्धि, अण्डाशय निषेचन या भ्रूण विकास के किसी एक अवस्था में रूकावट जिसके कारण बीज नहीं बनता है। ब्रेसीकेसी कुल की सब्जियाँ जैसे पत्तागोभी, फूलगोभी, ब्रोकोली, मूली आदि में इस तरह की स्व–अनिषेच्यता पायी जाती है जिसका उपयोग संकर बीज उत्पादन के लिए किया जाता है। संकर बीज की माँग को देखते हुए इसके प्रयोग को बढ़ावा देना समय की माँग है। इसके लिये नर बंध्यता तथा स्व अनिषेच्यता का प्रयोग करते हुए और अच्छी संकर किस्मों का विकास तथा फैलाव किया जाना चाहिए।

कठिनाइयाँ तो होती है सबके जीवन में,
पर सामना उनका साहसी ही करता है।।

कुछ लक्ष्य भी होते है सबके जीवन में,
पर प्राप्त उन्हें परिश्रमी ही करता है।।

तमन्ना तो सबकी होती है कि कुछ अलग करूँ,
पर साकार वहीं करते है जिन्हें जुनून होता है।।

चाहत तो होती है कि मैं भी सफल बनूँ,
पर बनते वही हैं जिनमें हिम्मत होती है।।

हिमान्शु यादव

गुणवत्तायुक्त सब्जी उत्पादन के लिए संरक्षित खेती

हरे कृष्ण, अनंत बहादुर, इन्दीवर प्रसाद, एस.एन.एस. चौरसिया, मनोज सिंह, इंद्रमणि, मो. अरशद नदीम एवं जगदीश सिंह

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

बढ़ती जनसंख्या के कारण खेती की जोत दिनों–दिन छोटी होती जा रही है जिससे खेती किसानों के लिए घाटे का सौदा बनती जा रही है। मौसमी बदलावों के कारण सब्जियों की पैदावार व गुणवत्ता प्रभावित हो रही है जिसके परिणामस्वरूप खुले वातावरण में पैदा की गयी सब्जियों से किसानों को विशेष मुनाफा नहीं मिल पाता। यदि खेती में उचित तकनीक का समावेश हो जाये तो निःसंदेह इससे काफी लाभ लिया जा सकता है। ऐसी ही एक तकनीक है पॉलीहाउस, जिसके द्वारा सब्जियों की खेती से किसान मालामाल हो सकता है। बे–मौसमी वर्षा, ओलावृष्टि, कड़ाके का पाला, सिहरा देने वाली शीतलहर और झुलसा देने वाली लू से भी इस खेती को कोई नुकसान नहीं पहुँचता है। वर्ष पर्यन्त होने वाली इस खेती के फायदे ही फायदे हैं जिसमें अच्छी कमाई होने के साथ ही भिन्न–भिन्न सब्जियों का स्वाद अलग से चखने को मिलता है। मौसमी परिस्थितियों के प्रभाव से बचाते हुये, बेहतर गुणवत्ता के साथ नियंत्रित दशा के लिए उपयुक्त संरचनाओं के अंतर्गत खेती को संरक्षित खेती कहते हैं। इस तकनीक के अंतर्गत पौधों को विशेष ढांचा, जिन्हें पॉलीहाउस कहते हैं, उनमें उगाया जाता है। वर्षा एवं ग्रीष्म ऋतु में खुले में उगाई गई सब्जियों पर बीमारियों व कीटों, विशेषकर विषाणु रोग फैलाने वाले कीटों का प्रकोप अधिक होता है। ऐसे में प्राकृतिक वायु संवाहित पॉलीहाउस में सब्जियों की खेती कर किसान कम लागत में गुणवत्तायुक्त सब्जियों का उत्पादन कर सकते हैं। प्राकृतिक वायु संवाहित पॉलीहाउस में अक्टूबर से मार्च तक टमाटर और शिमला मिर्च तथा मार्च से सितम्बर तक खरबूजा की सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। बीज रहित खीरे को मार्च–जून एवं जुलाई–अक्टूबर तक लगाया जा सकता है।

पॉलीहाउस में तापमान और आर्द्रता

पॉलीहाउस में ग्रीष्मकाल के दौरान तापमान में 5–7 डिग्री सेल्सियस कम करने के साथ 35–60 प्रतिशत आर्द्रता (नमी) वृद्धि एवं सर्दियों में, तापमान में 6–10 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि और आर्द्रता में 25–35 प्रतिशत तक की कमी पायी जाती है। ग्रीष्म काल के दौरान, परावर्ती एल्युमिनाइज्ड शेड फैब्रिक (70–75 प्रतिशत छाया) का उपयोग पॉलीहाउस में छाजन के रूप में तापमान को कम करने के लिए किया जाना चाहिए। यह छायादार जाली (शेड नेट) पौधों और फलों को गर्मी और तेज विकिरण से होने वाली क्षति से बचाता है। संरक्षित खेती के अंतर्गत कुछ प्रमुख सब्जी फसलों की जलवायुवीय आवश्यकताओं को सारिणी–1 में दर्शाया गया है:

सारिणी 1: संरक्षित खेती के अंतर्गत फसलों की जलवायुवीय आवश्यकता

फसल	तापमान (डिग्री सेल्सियस)		नमी या आर्द्रता (प्रतिशत)	प्रकाश की तीव्रता (लक्स)
	दिन	रात		
टमाटर	22–27	15–19	50–65	50,000–60,000
खीरा	24–27	18–19	60–65	50,000–60,000
शिमला मिर्च	21–24	18–20	50–65	50,000–60,000

पॉलीहाउस के प्रकार

1. कम लागत वाली पॉलीहाउस

कम लागत वाला पॉलीहाउस 200 माइक्रोन (800 गेज) के पारदर्शी पॉलीथीन की चादर, जूट की सुतली, कील एवं बांस का बना होता है। बाहर की

अपेक्षा, पॉलीहाउस के भीतर तापमान 6–10 डिग्री सेल्सियस और बढ़ जाता है। ग्रीष्मकाल के दौरान, तापमान को कम करने के लिए ग्रीनहाउस के दरवाजे और खिड़कियाँ/वेंटिलेटर खोल देनी चाहिए।

2. मध्यम लागत वाले पॉलीहाउस

इस प्रकार की संरचना में 15 मिमी. व्यास के जीआई पाइप और 200 माइक्रोन मोटाई के यूवी–स्थिर पॉलिथीन से बनाया जा सकता है। ये प्राकृतिक वायु संवाहित (नेचुरली वेंटिलेटेड) अथवा फैन–पैड युक्त प्रकार के पॉलीहाउस हो सकते हैं। इन्हें बनाने में 1000–1500 रूपये प्रति वर्ग मीटर की लागत आ सकती है। इसके लिए राज्य सरकार द्वारा 50 प्रतिशत तक का अनुदान भी मिल सकता है।

3. उच्च लागत पॉलीहाउस

इसका निर्माण लोहे/एल्यूमीनियम के फ्रेम पर किया जाता है। तापमान, आर्द्रता और प्रकाश को स्वचालित मशीनों के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। इसकी जमीनी सतह (फर्श) और पक्षीय (साइड) दीवारों का कुछ भाग कंक्रीट से बना होता है। किसान भाइयों को जरूरत के अनुसार कम लागत वाले पॉलीहाउस को अपनाना चाहिए।

अन्य संरचनाएं

- **प्लास्टिक की कम ऊँचाई वाली सुरंगे**

यह संरचना पॉलीहाउस का लघु रूप हैं जिनकी ऊँचाई 0.75–1.0 मी. होती हैं। इनके निर्माण के लिए 100 माइक्रोन प्लास्टिककी चादर उपयुक्त है। इनका उपयोग नर्सरी या खेत में लगे क्यारियों को ढकने के लिए किया जाता है। जब जलवायु परिस्थितियाँ अनुकूल होती हैं तो आवरण (क्लैडिंग) सामग्री को हटाया जा सकता है।

- **नेट हाउस**

इस प्रकार की संरचना के ढांचे 3 मीटर ऊँचाई के होते हैं जिनकी छत समतल होती है। इन्हें ऊपर से विभिन्न रंगों में उपलब्ध छायादार नेट (35–90 प्रतिशत छाया) के साथ ढका जाता है।

संरक्षित खेती के अंतर्गत उगाई जाने वाली सब्जी फसलें

उत्तर भारत में टमाटर, चेरी टमाटर, रंगीन शिमला मिर्च, बिना बीज वाले (पार्थेनोकार्पिक) खीरे, फराश बीन्स (लता वाली), तरबूज और खरबूजा जैसी उच्च मूल्य की सब्जियों को बे–मौसम पॉलीहाउस/वॉक–इन सुरंगों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

उन्नत किस्में

टमाटरः एन.एस.–4266, सरताज, अविनाश, जी.एस. –600

चेरी टमाटर : बी.आर.–124 (हॉलैंड), पूसा चेरी प्रकार (आई.ए.आर.आई., पूसा), ओले, सेरान, लैला, रेगी

शिमला मिर्चः

- **पीले फल वालेः** ओरोबेल, सुपर गोल्ड, एन. एस.–285, एन.एस.–280, एन.एस.–3020और येलो वण्डर
- **लाल फल वालेः** बॉम्बी, 3019 तन्वी, टोर्केल
- **हरे रंग केः** कैलिफोर्निया वण्डर, भारत, इंद्रा, पूसा दीप्ति, ग्रीन गोल्ड

बिना बीज वाला खीराः मल्टीस्टार, ओलिविया, टर्मिनेटर, वाई.–225, डाइनामिक, फैन्ट्सी, गुर्खा, इंफिनिटी

नर्सरी की तैयारी

टमाटर और शिमला मिर्च की बुआई 98 खानों वाली जबकि बिना बीज वाले खीरे की बुआई 48 खानों वाले प्रो–ट्रे में की जाती है। इन प्रो–ट्रे में कोकोपीट + वर्मीक्यूलाइट + परलाइट 3:1:1 के अनुपात में भरे जाते हैं। अंकुरण के 15 दिन बाद पौधों को 0.2 प्रतिशत, 19:19:19 (एनःपीःके) के घोल से पोषित करना चाहिए। थ्रिप्स से रोकथाम के लिए,

एसीफेट (0.75 ग्राम/लीटर) का छिड़काव किया जाना चाहिए। रोपण से पूर्व, पौधों की जड़ों को कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) से उपचारित किया जाना चाहिए।

क्यारी की तैयारी

टमाटर के लिए 100 सेमी. चौड़े और 20 सेमी. ऊँचे क्यारी तैयार कर उनके बीच 50 सेमी. का रास्ता छोड़ देना चाहिए। प्रति क्यारी दो पंक्तियों में 60 X 45 सेमी. की दूरी पर पौधों त्रिकोणीय दशा में लगाया जाना चाहिए। शिमला मिर्च को भी त्रिकोणीय तरीके से 45 X 30 सेमी. की दूरी पर लगाया जाता है। खीरे हेतु क्यारी से क्यारी की दूरी 1.5 मीटर होनी चाहिए तथा त्रिकोणीय तरीके से 60 X 60 सेमी. की दूरी पर पौधे लगाये जाने चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रयोग

अच्छी तरह से सड़े जैविक खाद को 10–15 किग्रा. प्रति वर्ग मीटर की दर से क्यारी में देना चाहिए। बाजार में उपलब्ध उर्वरक 19:19:19 (एनःपीःके) को 7 ग्राम प्रतिवर्ग मीटर के दर से देना चाहिए। पौध रोपाई के 25 दिन बाद से, प्रति सप्ताह 19:19:19 (एनःपीःके) को दो बार 500 ग्राम प्रति 1000 वर्ग मीटर की दर से देना चाहिए। फसलों को सूक्ष्म पोषक तत्वों के मिश्रित घोल (जिसमें लौह, जिंक, तांबा, मैंगनीज, बोरान और मालिब्डेनम प्रत्येक की 3 ग्राम प्रति लीटर की दर से 30 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव किया जाना चाहिए।

ड्रिप बिछाना

इनलाइन ड्रिप जिसमें 40 सेमी. की दूरी पर एमिटर लगे हों तथा जिनकी क्षमता 2 लीटर प्रति घंटे हो, को प्रत्येक रोपण पंक्ति पर रोपण से पूर्व रखा जाता है। रोपण दूरी के आधार पर ड्रिप लाइनों की दूरी को समायोजित किया जाता है। फसल की आवश्यकता और मौसम की स्थिति के अनुसार, ड्रिप सिंचाई द्वारा प्रतिदिन 2–3 लीटर पानी प्रति वर्ग मीटर देना चाहिए।

पलवार लगाना

ब्लैक/सिल्वर पॉलीथीन मल्च फिल्म जिसकी मोटाई 25 माइक्रोन (100 गेज) और चौड़ाई 1.2 मीटर होती है, का प्रयोग रोपण के बाद क्यारियों को ढकने के लिए किया जाता है।

रोपाई

टमाटर के लिए, 20–25 दिन के, ओजस्वी और 25–30 सेमी. ऊँचाई के पौधों को रोपण के लिए चुना जाता है। शिमला मिर्च के लिए, स्वस्थ और रोग मुक्त 30–35 दिन की आयु वाले, 5–6 पत्तियों युक्त पौधों को रोपाई के लिए चुना जाता है जबकि खीरे के लिए, 20–25 दिन की आयु वाले 5–6 पत्तियों युक्त पौधों को चुना जाना चाहिए। रोपण हमेशा शाम को किया जाना चाहिए।

शाखाओं की छँटाई

टमाटर में छँटाई की प्रक्रिया, रोपण के 20–30 दिनों बाद साप्ताहिक अंतराल पर किया जाना चाहिए। सबसे पहले निकलने वाली फूलों के गुच्छों के ठीक नीची वाली पार्श्व शाखा और मुख्य तने को ही रखा जाना चाहिए जबकि अन्य पार्श्व शाखाओं को समय–समय पर हटा देना चाहिए (चित्र–1)। शिमला मिर्च को दो तने पर साधना चाहिए जबकि खीरे के पौधों की मुख्य तने को 25 सेमी. की ऊँचाई पर तोड़कर दो मजबूत पार्श्व शाखाओं को ऊपर की ओर बढ़ने दिया जाना चाहिए।

सधाई

पौधों की प्रत्येक शाखा को प्लास्टिक की सुतली द्वारा जमीन से 3 मीटर ऊपर लगे ओवरहेड जीआई तार से लटका कर सहारा देना चाहिए।

सधे टमाटर के पौधे

अवांछनीय पत्तियों को हटाना

टमाटर में रोपाई के 70 दिनों वाली पुरानी पत्तियों को हटाना शुरू कर देना चाहिए। टमाटर और खीरे में, शीर्ष से नीचे की ओर केवल 1.5 मीटर ऊँचाई तक ही पत्तियाँ रहने देना चाहिए जबकि शिमला मिर्च में केवल 1 मीटर तक ही पत्तियाँ रहने देना चाहिए।

कटाई और उपज

टमाटर को रंग परिवर्तन अवस्था पर तोड़ा जाता है। टमाटर की पैदावार पॉलीहाउस में 170–180 टन प्रति हेक्टेयर तक पहुँच सकती है। प्रारंभिक तुड़ाई के दौरान प्रति फल का वजन 100 ग्राम से अंतिम तुड़ाई के दौरान 60 ग्राम प्रति फल तक हो जाता है। इसके विपरीत, बाहर खेत में उपज केवल 55 टन प्रति हेक्टेयर तक प्राप्त की जा सकती है। शिमला मिर्च की उपज संरक्षित खेती में 100–120 टन प्रति हेक्टेयर (या 4–5 किग्रा. प्रति पौधा) तक हो सकती है जबकि खीरे में 300–400 टन प्रति हेक्टेयर उत्पादन

पॉलीहाउस– शिमला मिर्च

लिया जा सकता है। पॉलीहाउस में सब्जियों की खेती कर 1000 वर्ग मीटर क्षेत्र से प्रति वर्ष 2.0–2.5 लाख रुपये तक का शुद्ध मुनाफा सहजता से प्राप्त किया जा सकता है। टमाटर और खीरे की खेती से 1.8–2.0 लाख जबकि शिमला मिर्च उगाकर 2.0–2.5 लाख रूपये तक का मुनाफा प्राप्त किया जा सकता है।

यदि ग्लोबल वार्मिंग को रोका नहीं जाएगा,
तो इस पृथ्वी पर कोई जीव बच नहीं पाएगा

भूली बिसरी सब्जी: बाकला

इन्दीवर प्रसाद, राकेश कुमार दुबे, हरे कृष्ण, राजशेखर रेड्डी एवं मनीष सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

बाकला (*विसिया फाबा*) फेबेसी कुल की एक महत्वपूर्ण अल्प–प्रचलित दलहनी फसल है जिसे सब्जी और दाल दोनों रूपों में प्रयोग बहुत प्राचीन समय से की जा रही है जिसके कारण इसे बीन ऑफ हिस्ट्री या बीन ऑफ बाईबिल भी कहा गया है। इसे फबा बीन, हॉर्स बीन अथवा विंडसर बीन के नाम से भी जाना जाता है। बाकला की नरम मुलायम फलियों को सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है तथा सूखे दानों को दाल के रूप में प्रयोग किया जाता है। बाकला के कच्चे दानों को निकालकर राजमा, मूंग, उड़द, लोबिया, मटर, चने के साथ सब्जी के रूप में प्रयोग कर सकते हैं। पके दानों के छिलके उतार कर चने की दाल की तरह प्रयोग कर सकते हैं। इसके अलावा चने की तरह बेसन बना सकते हैं। इसके अलावा इसके दाने अंकुरित करके या भूनकर खा सकते हैं। गेहूँ के आटे के साथ मिल कर इसकी चपाती, नान, कचौरी, समोसा, डोसा, हलवा आदि बना सकते हैं। इसके साथ–साथ हरी फसल को पशुओं को चारे के रूप में भी खिलाया जा सकता है। दलहनी चारा फसलों की श्रेणी में विश्व में इसका तीसरा स्थान है। वर्तमान समय में बढ़ती वैश्विक जनसंख्या की पोषण सुरक्षा, मांस के अलावा प्रोटीन के वैकल्पिक स्रोतों से ही पूरी की जा सकती है। यद्यपि आज दुनिया के कई हिस्सों (विशेष रूप से मध्य पूर्व, भूमध्य क्षेत्र एवं दक्षिण अमेरिका) में बाकला प्रोटीन का एक लोकप्रिय स्रोत है। परन्तु यह अभी तक उन देशों में, जहाँ मांस प्रोटीन का प्रमुख स्रोत है, इसकी क्षमता का पूर्ण दोहन नहीं हो रहा है। हमारे देश में बाकला की खेती से पोषण सुरक्षा एवं आर्थिक लाभ की असीम संभावनाएं जुड़ी हुई हैं जिनका समुचित दोहन समय की मांग है। बाकला की हरी फलियाँ अत्यधिक पौष्टिक होती हैं (सारिणी–1)।

सारिणी–1: बाकला की हरी फलियों में पोषक तत्वों की मात्रा (प्रति 100 ग्राम खाने योग्य भाग में)

तत्व	मात्रा
नमी	85.4 ग्राम
प्रोटीन	4.5 ग्राम
वसा	0.1 ग्राम
रेशा	2.0 ग्राम
कार्बोहाईड्रेट	7.2 ग्राम
खनिज	0.8 ग्राम
ऊर्जा	48 किलो कैलोरी

एनीमिया और पीलिया रोग में भी इसका सेवन फायदेमंद माना जाता है। बाकला की खेती न केवल प्रोटीन आत्मनिर्भरता के लिए एक महत्वपूर्ण योगदान दे सकती है, बल्कि संभवतः बीमारियों की वृद्धि को कम करने में एक भूमिका निभा सकता है। इसके अलावा, बाकला वायुमंडलीय नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करने में भी सहायक है। यह 130–160 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक वायुमंडलीय नत्रजन को मृदा में स्थिर करने में सक्षम है। इस परिप्रेक्ष्य में बाकला के उत्पादन और खपत दोनों को प्रोत्साहित करना अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है। बाकला में अनेक खनिज तत्त्व जैसे– सोडियम, कैल्शियम, पोटेशियम, सल्फर, लोहा, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, थायमिन, नियासिन तथा विटामिन–सी भरपूर मात्रा में पाया जाता है। हालाँकि बाकला की बहुत अधिक ताजी फलियाँ एवं कम पकाई गई फलियों के सेवन से फेविज्म की बीमारी होने की भी सम्भावना होती है।

जलवायु

बाकला एक ठण्डी जलवायु की फसल है तथा इसकी बढ़िया पैदावार के लिए ठण्डे मौसम की आवश्यकता होती है। इसके बीजों के अंकुरण हेतु 22

डिग्री सेंटीग्रेड तापमान अनुकूल पाया गया है। सर्दियों में यह न्यूनतम 4 डिग्री सेंटीग्रेड के तापमान को सहन कर लेती है।

भूमि का चुनाव एवं खेत की तैयारी

बाकला की खेती के लिए जीवांशयुक्त भारी दोमट मिट्टी उपयुक्त होती है। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। खेत की तैयारी हेतु एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करने के उपरान्त 2–3 बार कल्टीवेटर या हैरो चलाकर पाटा से खेत समतल कर लेना चाहिए। बुआई के समय खेत में पर्याप्त नमी होना चाहिए। भूमि का पी.एच. मान 6.5–7.5 तक होना चाहिए।

उन्नत किस्में

बाकला की उन्नत किस्मों के विकास हेतु शोध कार्य कम हुआ है। भारत वर्ष में सब्जी योग्य बाकला की किस्में उपलब्ध नही हैं। बाहर के देशों में मुख्य रूप से इसकी दो किस्में उगाई जाती हैं:

(1) सफेद बीजों वाली
(2) हरे रंग के बीजों वाली

हरे रंग के बीजों वाली किस्में ज्यादा मुलायम होती हैं और फ्रीजिंग के लिए अच्छी मानी जाती हैं। इन किस्मों में ''रेलन'' एक अच्छी किस्म है

फलियों के आकार के आधार पर भी दो किस्में उगाई जाती हैं:

(1) छोटी फलियों वाली

(2) बड़ी फलियों वाली

विदेशों से लायी गयी किस्मों में मास्टर पीस ह्वाइट लॉन्ग पोड, मास्टरपीस ग्रीन लॉन्ग पोड, इम्पीरियल वाइट विंडसर तथा इम्पीरियल ग्रीन विण्डसर प्रमुख है। इसकी अन्य उन्नत किस्मों में विक्रांत, एस.एम.एल.–668, पूसा सुमित, स्वर्ण सुरक्षा, सेलेक्सन बी.आर.–1,सेलेक्सन बी.आर.–2 एवं जवाहर विसिया 73–81 प्रमुख हैं।

बिहार सरकार की राज्य फसल किस्म अनुमोदन समिति ने राज्य के असिंचित क्षेत्रों के लिए ''स्वर्ण सुरक्षा'' एवं सिंचित क्षेत्रों के लिए ''स्वर्ण गौरव'' नामक प्रजातियों का अनुमोदन किया है। इन प्रजातियों की उत्पादन क्षमता क्रमशः 25–31 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तथा 40–46 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। ये किस्में ''विक्रांत'' प्रजाति की तुलना में लौह, मैंगनीज और जस्ता की मात्रा में भी समृद्ध है। इनमें टैनिन और फाइटेट जैसे पोषण–विरोधी कारकों की मात्रा भी कम होती है। दोनों किस्में प्रमुख कीटों और रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोधी है।

चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय ने बाकला (फाबाबीन) की नई किस्म एच.एफ.बी.–1 विकसित की है। केन्द्रीय फसल किस्म अनुमोदन समिति ने इस किस्म को देश के समतल क्षेत्र (हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश तथा छत्तीसगढ़) में बुवाई के लिए अनुमोदन किया है। यह किस्म सिंचित तथा समय पर बुवाई के लिए उपयुक्त किस्म है। यह किस्म मुख्य रोगों एवं कीटों के प्रति प्रतिरोधी है तथा यह तेज हवा व तेज वर्षा के कारण जमीन पर बिछती नहीं है। हिसार में एच.एफ.बी.–1 किस्म की औसत पैदावार 43–50 कुन्तल प्रति हेक्टेयर दर्ज की गई है जो बाकला की लोकप्रिय किस्म विक्रान्त से 7.90 कुन्तल प्रति हेक्टेयर अधिक है जबकि राष्ट्रीय स्तर पर एच.एफ.बी.–1 किस्म की औसत पैदावार (22.87 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) विक्रांत किस्म (20.70 कुन्तल प्रति हेक्टेयर) की औसत पैदावार से 10.90 फीसद अधिक पाई गई है। शून्य टैनिन वाली प्रजातियों का विकास बाकला का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है जिससे न केवल पोषण सुरक्षा हो सकेगी बल्कि आय में मुनाफा भी हो सकेगा।

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) द्वारा बाकला की उन्नत प्रजाति के विकास एवं चयन हेतु विगत तीन वर्षों से शोध कार्य चल रहा है। इसके अंतर्गत बाकला के 115 जननद्रव्यों का परिवर्धन करते हुए उपज तथा विभिन्न औद्यानिकी गुणों हेतु इनका मूल्यांकन एवं चयन किया गया जिसके उपरांत मुरादाबाद–103, ईसी 628941, ईसी 628921, ईसी 841776, चेरी, ईसी

841609, ईटी–3160 एवं ईटी–1107 जैसे प्रभेद उपज एवं रोग प्रतिरोधिता हेतु उत्कृष्ट पाए गये हैं। भा.कृ. अनु.प.–राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो, नई दिल्ली द्वारा बाकला के जननद्रव्यों को बीज गुण के आधार पर वर्गीकृत किया गया है जिसका विवरण सारिणी–2 में दर्शाया गया है:

सारिणी–2: बाकला के जननद्रव्य में बीज के गुण धर्मों हेतु विविधता

श्रेणी	**विशेषता**	**किस्में**
बीज का रंग	काला	एच.बी.बी.–1
	भूरा	सोलन लोकल, फैजाबाद लोकल–II, एच.पी.क्यू.–2
	काला भूरा	ईसी–284373, एच.बी.बी.–3, ज्वालामुखी लोकल
	ळरा	एच.बी.बी.–5
	लल	ईसी–284368, ईसी–284374, ईसी–284375, एच.बी.बी.–2, पालमपुर लोकल
	लाल पीला	एच.बी.बी.–4, डी.पी.बी.बी.–7, फैजाबाद लोकल–1, जबलपुर सेलेक्शन–2
	पीला	एच.बी.बी.–6
	पीला हरा	ईसी–284347, ईसी–284366, ईसी–284369, ईसी–284369, ईसी–284372, जबलपुर सेलेक्शन–1, एचपीक्यू–1
बीज की आकृति	सपाट	ईसी–284368, ईसी–284369, ईसी–284372, ईसी–284373, ईसी–284374, ईसी–284375, एच.बी.बी.–1, एच.बी.बी.–3, एच.बी.बी.–6, डी.पी.बी.बी.–7, एच.पी.क्यू. –1, फैजाबाद लोकल–II, जबलपुर सेलेक्शन– II
	सपाट गोल	पालमपुर लोकल
	गोल	ईसी–284347, ईसी–284366, एच.बी.बी.–2, एच.बी.बी.–4, एच.बी.बी.–5, एचपीक्यू–2, ज्वालामुखी लोकल, सोलन लोकल, फैजाबाद लोकल–I, जबलपुर सेलेक्शन–I
बीज का आकार	बड़ा	ईसी–284368, ईसी–284369, ईसी–284372, ईसी–284373, ईसी–284374, ईसी–284375, एच.बी.बी.–3, एच.बी.बी.–5, पालमपुर लोकल
	मध्यम	एच.बी.बी.–1, एच.बी.बी.–2, एच.बी.बी.–6, डी.पी.बी.बी.–7, ज्वालामुखी लोकल, फैजाबाद लोकल–I, जबलपुर सेलेक्शन– I, ईसी– 284347, ईसी–284366
	छोटा	एच.बी.बी.–4, एच.पी.क्यू.–1, एचपीक्यू–2, सोलन लोकल, फैजाबाद लोकल– II, जबलपुर सेलेक्शन– II

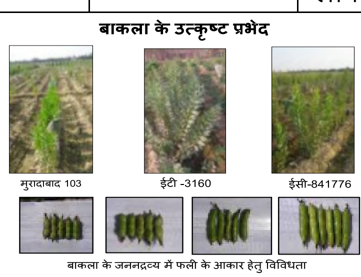

बाकला के चयनित जननद्रव्य एवं फली विविधता

बीज दर और बुआई

उत्तर भारत के राज्यों में बाकला की बुआई सितम्बर–अक्टूबर में की जाती है। बुआई के लिए प्रति हेक्टेयर 80–100 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। इसकी बुआई कतारों में करनी चाहिए एवं कतारों के मध्य 45–50 सेमी. तथा पौधों के मध्य 10–15 सेमी. की दूरी रखनी चाहिए। बीज को 5–6 सेमी. की गहराई पर बोना चाहिए। बीज को 2–3 ग्राम थीरम या कार्बेन्डाजिम या 4 ग्राम ट्राईकोडर्मा प्रति किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

मृदा परीक्षण के आधार पर खाद एवं उर्वरकों का इस्तेमाल करके बाकला का अच्छा उत्पादन प्राप्त कर सकते है। खेत की अंतिम जुताई के समय 8–10 टन सड़ी गोबर की खाद मिट्टी में मिला देनी चाहिए।

इसके अलावा 20–25 किग्रा. नाइट्रोजन, 40–50 किग्रा. फॉस्फोरस तथा 30–40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से उर्वरक देना लाभदायक है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय कूड़ों में देनी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा फसल में फूल आने के समय देना चाहिए।

जल प्रबंधन

सूखा सह फसल होने के कारण बाकला को सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती है, परन्तु अधिक उत्पादन हेतु खेत में नमी बनी रहनी चाहिए। अतः मृदा में नमी की स्थिति के अनुसार 10–15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था होना चाहिए क्योंकि जल ठहराव की स्थिति में फसलोत्पादन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

फसल सुरक्षा

बाकला में चूर्णिल आसिता एवं एन्थ्रेक्नोज नामक फफूँद् जनक बीमारी प्रायः आती है और फसल को नुकसान पहुँचाती है। बाकला में माहूँ एवं फली छेदक कीटों का प्रकोप ज्यादा होता है जिनका नियंत्रण करना आवश्यक है।

खरपतवार नियंत्रण

फसल की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवारों के नियंत्रण हेतु आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई करना चाहिए। खरपतवारनाशी पेंडीमेथलिन 3.0 मिली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल कर बुआई के 3 दिन के अन्दर छिड़काव करने से खरपतवार नियंत्रित रहते हैं।

तुड़ाई एवं उपज

बाकला की पूर्ण विकसित हरी फलियों की तुड़ाई मुलायम अवस्था में करनी चाहिए क्योंकि देर से तुड़ाई करने पर फलियाँ कड़ी और रेशेदार हो जाती हैं। सितम्बर–अक्टूबर में बोई गई फसल से 3–4 महीनों में फलियाँ तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती है। हरी फलियों को तुड़ाई उपरान्त छायादार स्थानों पर रखना चाहिए। फलियों को ताजा रखने के लिए इन पर बीच बीच में पानी का छिडकाव करते रहना चाहिए। हरी फलियों की औसत उपज 7.0–10.0टन/हे. तक होती है। सूखे दानों की औसत उपज 1.2–1.5 टन/हे. प्राप्त होती है। दानों को अच्छी प्रकार सुखाकर 6–9 प्रतिशत नमी पर भंडारित करना चाहिए।

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में सभासीन हो सकती है। – मैथिलीशरण गुप्त।

बीज जनित रोगों की पहचान

रामेश्वर सिंह, पी.एम. सिंह, सी. मनीमुरूर्गन एवं ए.एन. त्रिपाठी

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

बीज कृषि का मुख्य स्तम्भ है। मनुस्मृति में कहा गया है कि ''सुबीजम सुक्षेत्रें जायते सम्पादायते''। विश्व की 90 प्रतिशत फसलें बीजों से प्रवर्धित की जाती हैं। बिजाण्ड निषेचन से लेकर बीज विकास, परिपक्वता, भण्डारण, बुवाई एवं अंकुरण तक बहुत सारे जैविक एवं अजैविक कारकों से प्रभावित होता है। बीज जनित बीमारियों के रोगजनक बीज आवरण के बाहर या भीतर, भ्रूण एवं इण्डोस्पर्म में उपस्थित रहते हैं। वैश्वीकृत दुनिया में फसल उन्नयन कार्यक्रम हेतु विभिन्न देशों के मध्य बीज का आदान–प्रदान हो रहा है जिससे संक्रमित बीज में उपस्थित रोगजनक दूसरे स्थान पर पहुँच जाते हैं। ''सुरक्षा से बचाव अच्छा'' होता है, इसलिए आयात–निर्यात के पूर्व बीज के स्वास्थ्य का परीक्षण

बीज स्वास्थ्य परीक्षण प्रयोगशाला

अवश्य करना चाहिए। बीज कवकों, जीवाणओं, विषाणुओं, कीटों, सूत्रकृमियों एवं कार्यिकीय विकारों से मुक्त होना चाहिए। बीज स्वास्थ्य का परीक्षण बीज उत्पादन एवं विपणन से जुड़े हुए सरकारी/निजी संगठनों द्वारा अनुशंसित विधियों द्वारा किया जाता है।

विभिन्न प्रकार की सब्जियों के संक्रमित बीज भी रोग जनकों के वाहक का काम करते हैं। यहाँ पर आन्तरिक व बाह्य बीज जनित रोग जनकों का विवरण सारिणी–1 में दिया गया है:

बीज परीक्षण हेतु मानक निर्देश

अन्तर्राष्ट्रीय बीज परीक्षण संगठन (आई.एस.टी.ए.) का गठन सन् 1924 में कैंब्रिज, यू.के. में आयोजित चौथी बीज परीक्षण कांग्रेस में की गयी। बीज परीक्षण की विधियों के विकास पर ध्यानाकर्षण किया गया। मानकीकृत बीज परीक्षण की विधियों एवं तकनीकियों को आई.एस.टी.ए. द्वारा विकसित किया गया है।

स्वस्थ एवं संक्रमित बीज

सारिणी–1 : सब्जियों के बीज जनित रोग

फसल	रोग	रोग कारक	संक्रमण का प्रकार
बैंगन	फल गलन/झुलसा	*फोमोप्सिस वकान्स*	आंतरिक
मिर्च	अगेती झुलसा	*अल्टरनेरिया सोलेनी*	आंतरिक
	एन्थ्रेक्नोज	*कोलेटोट्राइकम कैप्सिसि*	आंतरिक
टमाटर	अगेती झुलसा	*अल्टरनेरिया सोलेनी*	वाहय
	मोजैक	*टोबैको मोजैक विषाणु*	आंतरिक
गांठ गोभी	ब्लैक लेग	*फोमालिंगम*	आंतरिक

फूलगोभी एवं पत्तागोभी	ब्लैक लेग	*फोमालिंगम*	आंतरिक
	ब्लैक राट	*जैन्थोमोनास कम्पेस्ट्रिस*	आंतरिक
	साफ्ट राट	*इरविनिया कैरोटोबोरा*	आंतरिक
ग्वार (क्लस्टर बीन)	एन्थ्रेक्नोज	*कोलेटोट्राइकम लिण्डेमुथियेनम*	आंतरिक
फराश बीन (फ्रेन्च बीन)	कामन मोजैक	*बीन मोजैक विषाणु*	आंतरिक
	एन्थ्रेक्नोज	*कोलेटोट्राइकम लिण्डेमुथियेनम*	आंतरिक
सेम	एन्थ्रेक्नोज	*कोलेटोट्राइकम लिण्डेमुथियेनम*	आंतरिक
मटर	रस्ट (गेरूआ)	*यूरोमाइसिस पाइसाइ*	बाह्य
सोयाबीन	मृदुरोमिल आसिता	*पेरोनोस्पोरा मैन्सचुरिका*	बाह्य

सारिणी–2: सब्जी फसलों में बीज जनित रोगों की पहचान की विधियाँ (आई.एस.टी.ए., 2016)

फसल	**रोग का नाम**	**रोग कारक**	**विधियाँ**
टमाटर	मोजैक	टोबैको मोजैक विषाणु	सूचक पौधों पर धब्बे
गोभी वर्गीय सब्जियाँ	ब्लैक लेग	*फोमालिंगम*	ब्लाटर विधि, फ्रोजिंग ब्लाटर विधि
	ब्लैक राट	*जैन्थोमोनास कम्पैस्ट्रिस*	फील्ड हाउस, सैसर (एफ.एस.) सेमी–सलेक्टिव पी.सी.आर.
सेम वर्गीय सब्जियाँ	एन्थ्रेक्नोज	*कोलेटोट्राइकम लिण्डेमुथियेनम*	आई.एस.टी.ए. ऐशे
प्याज	परपल ब्लाच	*अल्टरनेरिया पोरी*	अगार प्लेट विधि
	लीफ ब्लाइट	*स्टेमफिलियम बेसिकेरियम*	पोटैटो डेक्ट्रोज अगार प्लेट विधि
कद्दू वर्गीय सब्जियाँ	गमी स्टेम ब्लाइट	*डिडायमेल्ला ब्रायोनी*	ब्लाटर व पी.सी.आर.

बीज प्रमाणीकरण पद्धति

बीज गुणवत्ता के नियंत्रण में बीज प्रमाणीकरण का बहुत महत्व है। प्रक्षेत्र निरीक्षण के समय आधार व प्रमाणित बीज के उत्पादन हेतु अधिकतम संक्रमण प्रतिशत का विवरण सारिणी–3 में दिया गया है। यदि संस्तुति से अधिक रोग ग्रसित पौधे रहते हैं तो उस प्रक्षेत्र को बीज उत्पादन के लिए अनुसंशित नही किया जाता है।

सारिणी–3: बीज उत्पादन प्रक्षेत्र में बीज प्रमाणीकरण हेतु संस्तुत रोग ग्रसित पौधों का प्रतिशत

फसल	**बीज जनित रोग**	**अधिकतम रोग ग्रसित पौध (प्रतिशत)**	
		आधार	**प्रमाणित**
बैंगन	फोमोप्सिस ब्लाइट	0.1	0.5
टमाटर	अर्ली ब्लाइट	0.1	0.5
	टोबैको मोजैक विषाणु		
गोभी वर्गीय सब्जियाँ	ब्लैक लेग, ब्लैक राट	0.1	0.5
	साफ्ट राट		
मिर्च/शिमला मिर्च	एन्थ्रेक्नोज	0.1	0.5
खरबूजा	कुकुम्बर मोजैक विषाणु	0.1	0.2

बीज प्रमाणीकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत बीज जनित रोगों के पहचान के लिए मानित परीक्षण विधियों को नीचे दिया गया है:

- दृश्य निरीक्षण
- बीज को साफ करने की तकनीकी द्वारा
- बीज को उगाकर
- ब्लाटर विधि
- चयनित मीडिया पर उष्मायन (इनक्यूवेशन) विधि
- इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप विधि
- आण्विक विधि

बीज जनित रोगों का निदान

दृश्य निरीक्षण

बीज जनित रोगों की पहचान बीज को देखकर (जिसमें बीज का रंग, धब्बे, सिकुड़न आदि महत्वपूर्ण हैं) किया जाता है। इस विधि का प्रयोग, सेम वर्गीय सब्जियों में एन्थ्रेक्नोज की पहचान, मटर में ब्लाइट की पहचान, ब्रेसीकेसी कुल की सब्जियों में ह्वाइट राट आदि के लिये किया जाता है (सारिणी–4)।

संक्रमित बीज का निरीक्षण

सारिणी–4: लक्षणों द्वारा बीज जनित रोगों की पहचान

सब्जियाँ	बीज असामान्यता	विषाणु
टमाटर	नेक्रोटिक, काला	टोबैको मोजैक
मटर	झुर्रीदार, हरा–भूरा बीज आवरण	मटर अर्ली ब्राउनिंग
कुम्हड़ा	बीज ठीक से भरा नहीं, बीज बनावट अनियमित	स्क्वाश मोजैक
बाकला	बीज बनावट दो रंग का	बीन यलो मोजैक
लोबिया	सिकुड़ा	माहूँ से वांछित होने वाला मोजैक

बीज धुलाई तकनीक

इस विधि में परख नली में आसवित जल लेकर 2–3 बूँद साबुन डालकर उसमें कुछ बीज डाल देते हैं उसको कुछ देर तक हिलाने के बाद स्टेरियो वाइनाकुलर माइक्रोस्कोप से निरीक्षण करते हैं। इस विधि का प्रयोग बाह्य बीज जनित रोगों की पहचान के लिए किया जाता है।

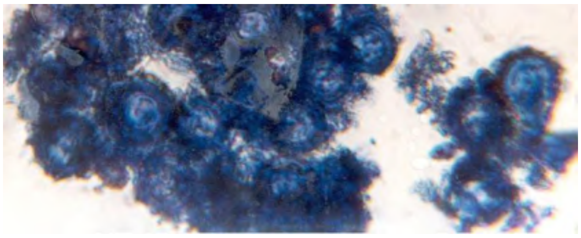

बीज धुलाई से प्राप्त जल में मृदु रोमिल आसिता के बीजाणु

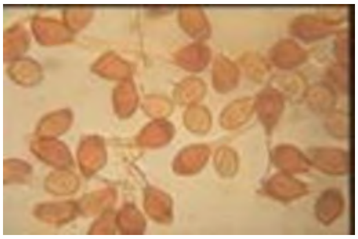

बीज धुलाई से प्राप्त जल में गेरूआ रोग जनक के बीजाणु

- **बीज को उगाना**

इस विधि में नियंत्रित दशा में बीजों को उगाते हैं। अंकुरण के बाद पौध में रोग के लक्षण को पहचानते हैं जिससे आंतरिक बीज जनित रोग जनकों की पहचान की जाती है। इस परीक्षण के लिए अधिक मात्रा में बीज की आवश्यकता होती है।

ग्रोआउट टेस्ट

- **ब्लाटर पेपर विधि**

तीन 90 एम. एम. फिल्टर पेपर को आसवित जल में भिगोकर प्लास्टिक पेट्री डिस में रखते है। इसके बाद

समान दूरी पर पेट्री डिश में फिल्टर पेपर के ऊपर बीज रखते हैं। इस तरह 25 पेट्री डिश में कुल 400 बीज रखें। *अल्टरनेरिया* प्रजाति के परीक्षण के लिए 20±2 डिग्री सेन्टीग्रेड पर अंधेरे में 24 घंटे रखें।

ब्लाटर पेपर विधि से बीज स्वास्थ्य का परीक्षण

इसके बाद 6 दिन तक 20±2 डिग्री सेन्टीग्रेड पर 12 घंटे अंधेरे एवं 12 घंटे प्रकाश में रखे। इसके बाद कवक वृद्धि की जांच के लिए स्टेरियोस्कोपिक माइक्रोस्कोप का प्रयोग करते हैं। *फोमालिंगम* कवक के लिए 20 डिग्री सेन्टीग्रेड पर 11 दिन तक 12 घंटे अंधकार एवं 12 घंटे प्रकाश में रखते हैं। परीक्षण केवल कवकीय रोगजनकों के पहचान के लिए किया जाता है।

- **दो पेपर के मध्य बीज को रखकर परीक्षण**

सेमवर्गीय सब्जियों में *कालेटोट्राइकम लिण्डेमुथियेनम* का परीक्षण इस विधि द्वारा किया जाता है। इस परीक्षण में 400 बीज की आवश्यकता होती है। परीक्षण के पहले बीज को सोडियम हाइपोक्लोराइट के 1 प्रतिशत के घोल में 10 मिनट के लिये डूबो लेते हैं। इसके बाद 50 बीज को दो गीले टावेल पेपर के ऊपर रखकर दूसरे पेपर से बीज को ढक देते हैं। उसके बाद पालीथीन से पेपर को लपेट देते हैं जिससे नमी बनी रहती है। उसके बाद परीक्षण के लिए 20 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर सात दिन तक अंधेरे में रखते हैं।

- **चयनित मीडिया विधि**

इस विधि में फिल्टर पेपर की जगह बीज को चयनित मीडिया में रखते हैं। इस विधि का प्रयोग बीज को परीक्षण में रखने से पहले 1 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइड के घोल में 10 मिनट तक उपचारित करते हैं। *अल्टनेरिया, एस्कोकायटा, कोलेटोट्राइकम, फ्यूजेरियम, राइजोक्टोनिया, स्कलेरोटोनिया*प्रजातियों के पहचान हेतु 28 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर 7 दिन तक अंधेरे में रखा जाता है। सामान्यतया पोटैटो डेक्सट्रोज अगर (पी.डी.ए.) का मिडिया के लिए प्रयोग किया जाता है।

				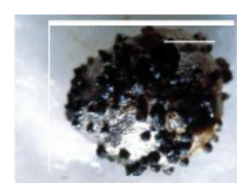
कोलेटोट्राइकम	***फ्यूजेरियम***	***राइजोक्टोनिया***	***स्कलेरोटोनिया***	***एस्कोकायटा***

- **सूचक पोषकों पर लक्षण प्रारूप**

संक्रमित बीज में विषाणुओं की उपस्थिति हेतु परीक्षण किये जाने वाले बीज को जलीय मिडियम में डूबोकर पेस्ट बनाकर उसको सूचक पौधों जैसे–लोबिया, तम्बाकू, *चेनोपोडियम एमरेन्टीकलर* आदि पर प्रयोग करते हैं। इसके बाद पौधों की पत्तियों को पानी से साफ कर पौधों में विषाणु संक्रमण के लक्षण जैसे–शिराओं का सफेद/पीला होना, विभिन्न आकार वाले मोजैक, रेखाओं का पैटर्न, क्लोरोसिस, नेक्रोसिस एवं स्टंरिग आदि लक्षणों का निरीक्षण करते हैं।

- **माइक्रोस्कोपी**

इस विधि का प्रयोग बीज में कवक, जीवाणुओं एवं विषाणुओं के संक्रमण का पता लगाने के लिए किया जाता है। इस विधि में रोगजनक या विषाणु कण का अन्तर उनके आकारिकी के आधार पर करते हैं। अधिकांश फिलोमेण्टस एवं राड आकार वाले विषाणु

जैसे–पाटी विषाणु, पोटेक्स विषाणु एवं टोबैमो विषाणु के बीच अन्तर किया जा सकता है। परन्तु सामान्य आकारिकी वाले आइसोमेट्रिक विषाणुओं को इस विधि से नहीं पहचाना जा सकता है।

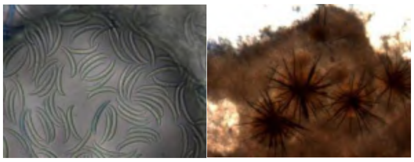

(अ) कोलेटोट्राइकम **की कोनिडिया एवं एसरवुलाइ**

(ब) अल्टरनेरिया **की कोनिडिया**

(स) फ्यूजेरियम **की स्पोरोडोचियमएवं माइक्रो एवं मैक्रो कोनिडिया**

स्टीरियो बाइनाकुलर माइक्रोस्कोप द्वारा परीक्षित बीज (चित्र : अ, ब एवं स)

- **सेरोलाजी आधारित जाँच**

यह विषाणुओं का संक्रमित बीजों में पता लगाने को संवेदी विधि है। इस विधि में एण्टीबाडी एवं एण्टीजन के बीच पारस्परिक संयुग्मन के आधार पर पहचान की जाती है। एन्जाइम लिंक्ड इम्यूनोसारवेन्ट (इलिसा) से बीज एवं वानस्पतिक प्रवर्धों में विषाणु संक्रमण की जाँच का सबसे ज्यादा आसान एवं विश्वसनीय तकनीक है।

- **आण्विक विधियाँ**

पी.सी.आर. पर आधारित आण्विक विधियों जैसे–आर ए पी डी, आर.एफ.एल.पी. एवं आर.टी.पी. सी.आर. का प्रयोग बीज जनित रोगों/रोगजनकों की पहचान के लिये किया जाता है। इन तकनीकियों के प्रयोग से बीजों में रोगजनकों की उपस्थिति की सही पहचान सम्भव होती है। ये विधियाँ परम्परागत विधियों की तुलना में अधिक विश्वसनीय, संवेदी व कम समय लेने वाली होती है। इन विधियों से सभी प्रकार के संवर्धनीय एवं असंवर्धनीय रोगजनकों की पहचान की जा सकती है।

संस्कृत माँ, हिंदी गृहिणी और अंग्रेजी नौकरानी है।
– डॉ. फादर कामिल बुल्के।

सब्जियों में पीड़कनाशियों के प्रयोग में कमी के उपाय

ए.एन. त्रिपाठी
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

सब्जियों में अन्य फसलों की तुलना में रोगों और कीटों का प्रकोप अधिक होता है। इससे फसलों के उपज में 50 प्रतिशत तक की क्षति होती है। किसान सब्जियों में रोगों और कीटों के नियंत्रण हेतु संश्लेषित पीडकनाशियों पर निर्भर होते हैं क्योंकि ये रसायन बाजार में आसानी से उपलब्ध होते है। संश्लेषित रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग से परागणकर्ता कीटों, मित्र कीटों, लाभदायक सूक्ष्मजीवों पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है एवं मृदा व जल प्रदूषण होता है। पीड़कनाशियों के सुरक्षित प्रयोग न करने से प्रक्षेत्र में श्रमिकों एवं कृषकों को इन विषाक्त रसायनों के कुप्रभावों को भी झेलना पड़ता है। पीड़कनाशियों का अनुशंसित मात्रा से ज्यादा प्रयोग करने से पीड़क कीटों एवं रोग जनकों में प्रतिरोधता विकसित हो जाती है जिससे ये कीट एवं रोगजनक प्रयोग किये जाने वाले रसायनों से नियंत्रित नही होते हैं। कीटों एवं रोगजनकों में होमोलिगोसिस की प्रक्रिया दिखाई देने लगती है जिसमें पीड़क कीटों एवं रोगजनकों का जीवन चक्र छोटा हो जाता है जिसके कारण पीड़कों से कम समय में फसल में अधिक क्षति पहुँचाने लगते हैं। सब्जी उत्पादन में कीटनाशियों का 0.56 किग्रा. स.त./हे. प्रयोग किया जा रहा है जो कि कुल कीटनाशियों के उपयोग में आने वाली मात्रा का 13–14 प्रतिशत है। पीड़कनाशियों के उपयोग की मात्रा का निर्धारण सक्रिय तत्व किग्रा. प्रति हे. के हिसाब से किया जाता है। इसके निर्धारण हेतु प्रति वर्ष कुल उपयोग में पाई गई पीड़कनाशियों की मात्रा को कुल कृषि के जोत से विभाजित करके किया जाता है। इस विधि में पीड़कनाशियों में उपस्थित सक्रिय तत्व की मात्रा की विषाक्तता का मानव के स्वास्थ्य व पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव को अनुमानित नही किया जाता है। सब्जियों में उत्पादन क्षति को कम करने हेतु पीड़क कीटों एवं रोगों का प्रबंधन आवश्यक है अतः किसानों को कीटनाशकों के सुरक्षित प्रयोग के विभिन्न तरीकों को अपनाना चाहिये। सब्जियों में प्रयोग किये जाने वाले बहुत से पीड़कनाशी ''केन्द्रीय कीटनाशी मण्डल पंजीकृत समिति'' द्वारा पंजीकृत नही है। ऐसी दशा में कीटनाशियों के प्रयोग में कमी लाने हेतु निम्न पहलुओं पर ध्यान देना चाहियेः

- **तकनीकी ज्ञान द्वारा पीड़कनाशियों के प्रयोग में कमी**

किसानों को पीड़कनाशियों की अनुशंसित मात्रा का ही उपयोग करना चाहिये क्योंकि यह मात्रा फसल, जलवायु, भौगोलिक क्षेत्रफल एवं पीड़कों की सघनता पर निर्भर करती है। पीड़कनाशियों के घोल बनाते समय सही मात्रा का आंकलन कर प्रयोग किया जाना चाहिये। किसानों को बाजार में उपलबध पीड़कनाशियों को फार्मुलेशन (संरूपण) में सक्रिय तत्व की प्रतिशतता पर ध्यान देना अति आवश्यक हैं उदाहरण के लिये बीजशोधन हेतु कार्बेण्डाजिम का 2 ग्राम प्रति किग्रा. बीज हेतु प्रयोग किया जाता है। परन्तु यह सक्रिय तत्व बाजार में बाविस्टिन (सक्रिय तत्व कार्बेण्डाजिम 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण) के रूप में उपलब्ध है अतः इसके 4 ग्राम के उपयोग से वांछित सक्रिय तत्व कार्बेण्डाजिम (2 ग्राम) की मात्रा बीज उपचार के लिये प्राप्त होगी। इसी प्रकार थायोमेथाक्साम 25 घुलनशील चूर्ण का प्रयोग सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु 50 ग्राम सक्रिय तत्व का प्रति हेक्टेयर प्रयोग अनुशंसित है अतः बाजार में एकटारा (सक्रिय तत्व थायोमेथाक्साम 25 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण) के रूप में उपलब्ध है तो फार्मुलेशन की आवश्यक मात्रा अनुशंसित सक्रिय तत्व की तुलना में 8 गुना अधिक अर्थात् 200 ग्राम मात्रा की आवश्यकता होगी। सामान्य रूप से प्रयोग में आने वाले इमिडाक्लोप्रिड के 30 ग्राम सक्रिय तत्व की मात्रा सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए प्रति हेक्टेयर

अनुशंसित है और यह फार्मुलेशन आईसोगाची (सक्रिय तत्व इमिडाक्लोप्रिड 30 प्रतिशत घुलनशील द्रव्य) के रूप में उपलब्ध है तो इसकी मात्रा 100 मिली. का प्रयोग करना होगा। पीड़कनाशियों के छिड़काव के लिये उपयुक्त छिड़काव यंत्रों का प्रयोग करना चाहिये। छिड़काव यंत्रों में नोजल का सही प्रयोग करना अति आवश्यक होता है क्योंकि ऐसा करने से ड्रिफ्ट की समस्या का समाधान भी होता है। छिड़काव का प्रभावीपन बढ़ाने के लिये इण्डक्सन नोजेल या कोणीय नोजेल का प्रयोग करना चाहिये। बचाव उपचार से अच्छा होता है अर्थात् किसानों को रोग व कीटरोधी किस्मों को लगाना चाहिये जिससे पीड़कनाशियों के प्रयोग में कमी लाकर कम लागत से अधिक सब्जी का उत्पादन कर सकें।

- **फसल पद्धति या फसल प्रणाली द्वारा पीड़कनाशियों के प्रयोग में कमी**

फसल प्रणाली के अन्तर्गत एक ही प्रक्षेत्र में निश्चित समय तक फसलों के लगाने के क्रम का प्रबंधन किया जाता है। यह प्रबंधन कृषि पारिस्थितिकी या राइजोस्फियर अभियांत्रिकी के सिद्धांत पर आधारित होता है, जिसके अन्तर्गत फसल चक्रण, अन्तर्वर्ती फसलों, सहचर फसलों, समोदर फसलों एवं पलवार आदि का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार फसल पद्धति को अपनाने से भूमि के स्वास्थ्य का प्रबंधन होता है एवं रोगजनकों का रोगचक्र व हानिकारक कीटों का जीवन चक्र भी टूट जाता है। उदाहरण के रूप में सब्जी फसलों की खेती में अनाज वाली फसलों के चक्रण से जड़ ग्रंथि सूत्रकृमि एवं मटर के उकठा रोग का प्रभावी प्रबंधन होता है। इसी प्रकार सब्जी फसलों की नर्सरी को अच्छी जल निकास वाली ऊँची क्यारियों में उगाने से आर्द्रगलन का प्रभावी प्रबंधन होता है। विषाणु जनित रोगों के प्रबंधन हेतु कीटों के नियंत्रण के लिये फसलों को नेट या मल्च से ढकना प्रभावी होता है। मूलग्रन्थि सूत्रकृमि के प्रकोप को कम करने के लिए सब्जी वाली फसलों के बाद अनाज वाली फसलों जैसे धान, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का फसल चक्र कम से कम 2–3 वर्ष तक अपनाना चाहिए। गेहूँ की फसल सूत्रकृमियों को कम करने में बहुत सहायक है अतः पौध सूत्रकृमियों से संक्रमित खेतों में गेंदा की खेती करनी चाहिए। नीम की खली का लगभग 25 कुण्टल प्रति हेक्टेयर की दर से पौध लगाने के पहले खेत में हल चलाकर मिला देने से सूत्रकृमि के अण्डे एवं जुवेनाइल में काफी कमी हो जाती है।

प्रपंच फसलें (ट्रैप क्राप)

ये फसलें उगाई जाने वाली सब्जी फसलों के कुल की या अन्य कुल की हो सकती हैं जिनकी पीड़क–कीटों को आकर्षित करने की क्षमता मुख्य फसल से ज्यादा होती है। इन फसलों को मुख्य फसल में दो प्रकार से रोपित किया जा सकता है; सीमान्त फसल के रूप में या पंक्तिबद्ध अन्तर्वती सस्यन के रूप में।

सीमान्त सस्यन (बार्डर क्रापिंग) एवं पंक्तिबद्ध अन्तर्वती सस्यन

भिण्डी के पर्ण पीत शिरा मोजैक विषाणु के समन्वित प्रबंधन हेतु सीमान्त फसलों के रूप में मक्के की 2 पंक्ति का लगाना प्रभावी होता है। पत्तागोभी के 25 पंक्तियों के बाद सरसों की 2 पंक्तियों (पहली पंक्ति मुख्य फसल की रोपाई के 15 दिन पहले एवं दूसरी पंक्ति रोपाई के 25 दिन बाद) को लगाने से हीरक पृष्ठ शलभ, माहूँ एवं पत्ती छेदक का पत्तागोभी की फसल में प्रकोप कम होता है। चाइनीज पत्तागोभी को ट्रैप फसल के रूप में प्रयोग करने से हीरक पृष्ठ शलभ का प्रभावी नियंत्रण होता है। रोपाई के समय टमाटर की 16 लाइन (25 दिनों के पौध से) के बाद एक लाइन गेंद की (45 दिन की पौध) रोपित करने से *हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा* के प्रभावी प्रबंधन के साथ–साथ जड़ ग्रंथि सूत्रकृमि का भी नियंत्रण होता है। लोबिया की फसल में अरण्डी के रोपण से *स्पोडोप्टेरा लिटुरा* का प्रभावी नियंत्रण होता है।

अन्तः सस्यन

इस पद्धति में विविध लक्षणों वाली फसलों के अन्तःसस्यन से मुख्य कीटों का प्रबंधन होता है। बैंगन

की फसल में सौंफ एवं सोया के अन्तः सस्यन से तना एवं फल छेदक के प्रकोप में कमी होती है। धनिया को पत्तागोभी की फसल में अन्तःसस्यन करने पर माहूँ के प्रकोप में कमी आती है। करेले में मक्का की फसल के अन्तःसस्यन से फल मक्खी के प्रकोप में कमी आती है (सारिणी–1)।

सारिणी–1: सब्जी फसलों में पीड़कों कीटों के प्रबंधन हेतु प्रभावी अन्तः सस्यन

फसल संयोजन (अन्तः सस्यन)	**लक्षित पीड़क**
पत्तागोभी + गाजर	हीरक पृष्ठ शलभ
ब्रोकली + फराशबीन	फली बीटल
पत्तागोभी + टमाटर	हीरक पृष्ठ शलभ
भिण्डी + मक्का	पर्ण शिरा मोजैक
करेला + मक्का	फल मक्खी
पत्तागोभी + भारतीय सरसों	हीरक पृष्ठ शलभ
पत्तागोभी + चाइनीज सरसों	हीरक पृष्ठ शलभ
बैंगन + धनियाँ + सौंफ + सोआ	तना एवं फल छेदक
टमाटर + गेंदा	जड़ ग्रन्थि सूत्रकृमि

पत्तागोभी + चाइनीज सरसों

टमाटर + गेंदा

सौंफ + बैंगन

सोआ + बैंगन

धनियाँ + पत्तागोभी

- **जैव पीड़कनाशियों या वानस्पतिक रसायनों के प्रयोग द्वारा पीड़कनाशियों के प्रयोग में कमी**

सब्जी फसलों के उत्पादन में जैव पीड़कनाशियों के प्रयोग द्वारा कीटों एवं रोगों का प्रबंधन किया जा सकता है। जैव पीड़कनाशियों को संश्लेषित पीड़कनाशियों के विकल्प के रूप में अपनाया जाना चाहिये। इन पीड़कनाशियों के प्रयोग से फसल उत्पादन, फसलों की वृद्धि व पीड़क कीटों एवं रोगजनकों में रसायनों के प्रति रोधिता का भी प्रभावी प्रबंधन होता है। जैव नियंत्रकों जैसे *बैसिलस सबटिलिस, स्यूडोमोनास फ्लुओरेसेन्स, ट्राइकोडर्मा विरडी* एवं *ट्रा. हार्जिएनम* से बीज एवं मृदा का उपचार, पौध जड़ों की डिपिंग एवं पर्णीय छिड़काव

करने से मृदोढ़ एवं बीजोढ़ रोगों द्वारा नियंत्रण होता है। *बैसिलस सबटिलिस* के जैव संरूपण बी एस–2 का 10 ग्राम/किग्रा. बीज के साथ बीजोपचार, नर्सरी में 50 ग्राम संरूपण का 5 किग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर प्रति 3 मी.^{2} क्षेत्र में प्रयोग करें। नर्सरी पौध की जड़ को 30 मिनट तक बी एस–2 के 0.1 प्रतिशत घोल में डुबोयें तथा 2.5 किग्रा संरूपण को 50 किग्रा गोबर की खाद में मिलाकर प्रति हे. की दर के प्रयोग से टमाटर की फसल में उकठा के प्रकोप में कमी होती है। बी. एस.–2 का संरूपण सामान्यतः प्रयोग में आने वाले कवकनाशी कार्बेण्डाजिम 50 डब्ल्यू. पी. (0.1 प्रतिशत) की तुलना में ज्यादा प्रभावी पाया गया है। इसके अलावा लोबिया में बी एस–2 से *कोलेटोट्राइकम लिण्डेमुथिएनम* एवं *स्केलेरोशियम रोल्फसाई* के प्रकोप में 60 प्रतिशत तक की कमी जबकि उपज में 50 प्रतिशत की वृद्धि होती है।

टाल्क मिश्रित दो जैव नियंत्रकों के संयोजनों (कंसोर्टिया) के प्रयोग से जैसे *ट्राइकोडर्मा विरडी (नर्सरी में 30 ग्राम/10 मी.^{2}; खेत में 30 किग्रा./हे.) एवं पोचोनिया क्लेमाइडोस्पोरिया* (नर्सरी में 20 ग्राम/10 मी.^{2}; खेत में 150 किग्रा./हे.) को नीम की खली (नर्सरी में 150 ग्राम/10 मी.^{2}; 150 किग्रा./हे.) के साथ मिलाकर मृदा में अनुप्रयोग से जड़ ग्रंथि सूत्रकृमियों का प्रभावी नियंत्रण होता है। *स्यूडोमोनास फ्लुओरेसेन्स एवं परपुरिओसीलियम लिलासिनस* के मिश्रण से भिण्डी में बीजोपचार (10 ग्राम/किग्रा. बीज) करने के बाद ही बुआई करनी चाहिये। ये जीवाणु सूत्रकृमियों के अण्डों को नष्ट करने के अलावा पौध प्रतिरोधक क्षमता को भी उत्प्रेरित करते हैं। मृदा अनुप्रयोग हेतु *स्यू. फ्लुओरेसेन्स* (10 ग्राम/किग्रा.) एवं *प. लिलासिनम* (10 ग्राम/किग्रा. गोबर की खाद) की दर से 1.5 टन/हे. गोबर की खाद में मिलाकर प्रयोग से जड़ ग्रंथि सूत्रकृमियों का प्रभावी नियंत्रण होता है।

सब्जी वर्गीय फसलों में पीड़क कीटों के प्रबंधन हेतु फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग करना चाहिये (सारिणी–2)। नीम गिरी के सत्व (4 प्रतिशत) का दो–तीन बार पर्णीय छिड़काव करना चाहिये (सारिणी–3)। बैंगन की फसल में फनल ट्रेप या बाटल ट्रेप (100/हे.) का प्रयोग रोपाई के 25–30 दिन बाद लगाने से तना एवं फल छेदक कीट के प्रयोग में कमी आती है। कद्दू वर्गीय सब्जियों में फल मक्खी के नियंत्रण हेतु पुष्पन अवस्था में बाटल ट्रैप या मैक फेल ट्रैप्स (एथेनालः क्यूलोरः कार्बोरिलः 8:1:2) का 25–30 ट्रैप्स/हे. का प्रयोग करना चाहिये।

स्टिकी ट्रैप

इनका प्रयोग ग्रीन हाउस एवं संरक्षित परिस्थितियों में उगाई जाने वाली सब्जियों में पीड़क कीटों जैसे सफेद मक्खी, थ्रिप्स एवं लीफ माइनर के नियंत्रण हेतु किया जाता है। कीटों के प्रभावी प्रबंधन हेतु समन्वित पीड़क प्रबंधन के अन्तर्गत इन ट्रैपों का प्रयोग करना चाहिये। स्टिकी ट्रैप कृषकों द्वारा कम लागत में कैन, टिन एवं पीले पालीथीन में ग्रीस या अरण्डी के तेल के लेपन की सहायता से बनाया जा सकता है।

पीला पालीथीन का स्टिकी ट्रैप

सारिणी–2 : सब्जी फसलों में पीड़क कीटों के प्रबंधन हेतु फेरोमोन ट्रैप (ल्यूर) की उपलब्धता

सामान्य नाम	प्रजाति	पोषक फसलें
तना एवं फल छेदक	*ल्यूसीनोड्स आर्बोनेलिस*	बैंगन
स्पाटेड बालवार्म	*इरियास विटेला*	भिण्डी

फल छेदक	*हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा*	टमाटर, भिण्डी, दलहनी सब्जियों
टोबैको कैटरपिलर	*स्पोडोप्टेरा लिटुरा*	भिण्डी, टमाटर, मटर, मिर्च
टमाटर लीफ माइनर	*टुटा अब्सोलुटा*	टमाटर
मेलन फ्लाई	*बैक्ट्रोसिरा कुकुरबिटी*	कद्दू वर्गीय सब्जियों
हीरक पृष्ठ शलभ	*प्लुटेला जाइलोस्टेला*	पत्तागोभी एवं फूलगोभी

सारिणी–3 :सब्जी फसलों में पीड़कों के नियंत्रण हेतु नीम आधारित कीटनाशी

वनस्पतिक कीटनाशी	**फसल**	**लक्षित पीड़क कीट**	**अनुशंसित मात्रा/हे.**
एजाडिरैक्टिन 0.03 प्रतिशत (300 पी पी एम)	भिण्डी, बैंगन, पत्तागोभी	फल छेदक, तना एवं फल छेदक, सफेद मक्खी, बीटल, लीफ हाफर, एफिड, डी बी एम	2.5–5.0 लीटर
एजाडिरैक्टिन 0.15 प्रतिशत (1500 पी पी एम)	भिण्डी, बैंगन, पत्तागोभी	एफिड, जैसिड, डी बी एम., फल छेदक, सफेद मक्खी	1–2 लीटर
एजाडिरैक्टिन 0.03 प्रतिशत (3000 पी पी एम)	पत्तागोभी	डी बी एम.	1.67–3.34 लीटर
एजाडिरैक्टिन 5 प्रतिशत (50000 पी पी एम)	भिण्डी, टमाटर, पत्तागोभी, बैंगन	डी. बी. एम., एफिड, स्पोडोप्टेरा, सफेद मक्खी, जैसिड, तना एवं फल छेदक	0.2 लीटर
एजाडिरैक्टिन 1 प्रतिशत (10000 पी पी एम)	टमाटर, बैंगन	फल छेदक, तना एवं फल छेदक	1.0–1.5 लीटर

सब्जी फसलों में संश्लेषित पीड़कनाशियों के विकल्प के रूप में जीवाणुवीय कीटनाशकों को प्रयोग में लाकर कीटों का प्रभावी प्रबंधन किया जा सकता है। इन जैविक पीड़कनाशियों के प्रयोग से जैविक सब्जी उत्पादन में कीटों के नियंत्रण के साथ–साथ एवं पीड़क कीटों में प्रति रोधिता का भी प्रबंधन होता है (सारिणी–4)।

सारिणी–4 : सब्जी फसलों में पीड़क कीटों के प्रबंधन हेतु सूक्ष्मजीवीय पीड़कनाशी

सूक्ष्मजीवीय पीड़कनाशी	**फसल**	**लक्षित पीड़क**	**अनुशंसित मात्रा/हे.**
बैसिलस थुरिन्जेन्सिस वर. *कुर्सटकी*, 30–38, एस.ए. – डब्ल्यू.यू.जी.	पत्तागोभी	हीरक पृष्ठ शलभ	0.5 कि.ग्रा.
बै. थुरिन्जेन्सिस वर. *कुर्सटकी* वर गैले	बैंगन	तना एवं फल छेदक	0.25–0.5 किग्रा.
बै. थुरिन्जेन्सिस वर. *कुर्सटकी*, एच पी.डब्ल्यू पी.	पत्तागोभी	हीरक पृष्ठ शलभ	300–500 ग्राम
बै. थुरिन्जेन्सिस वर. मैलेरी सीरोटाइप, 3 ए, 3 बी	पत्तागोभी	हीरक पृष्ठ शलभ	0.6–1.0 किग्रा.
	टमाटर	फल छेदक	1–1.5 किग्रा.
बै. थुरिन्जेन्सिस वर. *कुर्सटकी* स्ट्रेन जेड–523	भिण्डी	तना एवं फल छेदक	1–1.5 किग्रा.
बै. थुरिन्जेन्सिस वर. *कुर्सटकी* स्ट्रेन जेड–523	भिण्डी	तना एवं फल छेदक	0.4–1.0 किग्रा.
बै. थुरिन्जेन्सिस वर. *कुर्सटकी* डब्ल्यू पी	दलहनी सब्जियाँ	फल छेदक	0.75–1.0 किग्रा.
बेवरिया बेसिआना स्ट्रेन न. आई पी एल/बीपी/एम–1101 ($1X10^9$ सीएफयू/ग्रा.)	भिण्डी	फल छेदक एवं चित्तीदार इल्ली	3.75–5.0 किग्रा.
एन.पी.वी. (*स्पोडोप्टेरा लिटुरा*) 0.5 प्रतिशत ए एस	टमाटर	*स्पो. लिटुरा*	1500 मिली.
एन.पी.वी. (*हेलिकोवर्पा आर्मीजेरा*) 2.0 प्रतिशत ए एस	टमाटर	*हे. आर्मीजेरा*	250–500 मिली
एन.पी.वी. (*हे. आर्मीजेरा*) 0.43 प्रतिशत ए एस	टमाटर	*हे. आर्मीजेरा*	1500 मिली

- **कम्प्यूटर पर आधारित निर्णय प्रदाता ज्ञान का प्रयोग कर पीड़कनाशियों के प्रयोग में कमी**

पीड़क कीटों एवं रोगों के प्रकोप के पूर्वानुमान हेतु कम्प्यूटर पर आधारित ज्ञान को किसानों के बीच बढ़ाना चाहिये। इससे समयानुसार व चयनित स्थान में समय से रोगों और कीटों के प्रकोप की जानकारी किसानों को मिल सकेगी। यह जानकारी किसानों के निर्णय लेने की क्षमता को बढ़ायेगी और पीड़क प्रबंधन के एकीकृत घटकों को अपनाने में सहायक होगी। इस विधि से खेतों में लक्षित जगहों को पहचानकर रोगों व कीटों को प्रबंधित किया जा सकता है जिससे पीड़कनाशियों की कम मात्रा का समुचित प्रयोग हो सकेगा।

- **प्रशिक्षण कार्यक्रमों के आयोजन द्वारा पीड़कनाशियों के प्रयोग में कमी**

हमारे देश में 75 प्रतिशत किसान कीटनाशकों एवं रोगनाशकों में अन्तर ही नहीं कर पाते हैं। यही कारण है कि देश में किसानों द्वारा पीड़कनाशियों के अन्तर्गत कीटनाशियों (63 प्रतिशत) का सर्वाधिक प्रयोग हो रहा हैं। किसानों के व्यवहार में परिवर्तन व नवाचार को अपनाने हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रमों को चलाने की आवश्यकता है जिससे किसान तकनीकी रूप से सम्बन्धित कीट एवं रोग प्रबंधन को अपना सकें।

- **एकीकृत पीड़क प्रबंधन का प्रदर्शन कर पीड़कनाश के प्रयोग में कमी**

एकीकृत पीड़क प्रबंधन के कार्यक्रमों को प्रक्षेत्र स्तर पर प्रदर्शन के माध्यम से किसानों को जागरूक कर इसके लाभों को दिखाना (देखकर विश्वास करना) चाहिये। एकीकृत पीड़क प्रबंधन के घटकों में कृषि क्रियाओं को अपनाना, रोग व कीटरोधी किस्मों को खेत में लगाना एवं जैव नियंत्रकों का प्रयोग आता है। सब्जियों में पीड़कनाशियों के ''शून्य सहिष्णुता'' के सिद्धांत को पूर्णतया अपनाने का प्रयास करना चाहिये। पीड़कनाशियों की अन्तिम विकल्प के रूप में ही प्रयोग करना चाहिये।

मैं दुनिया की सब भाषाओं की इज्जत करता हूँ, परन्तु मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो, यह मैं नहीं सह सकता।
– विनोबा भावे।

सब्जियों में कीट नियंत्रण के सामान्य सिद्धांत तथा कीटनाशी रसायनों का संतुलित उपयोग

ए.पी. सिंह, जयदीप हालदार एवं ए.बी. राय

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

देश में विभिन्न कृषि–जलवायु स्थितियों के कारण, भारत के विभिन्न हिस्सों में 66 से अधिक प्रकार की सब्जियाँ उगायी जातीहैं। सब्जियाँ हमारे आहार का एक अनिवार्य हिस्सा हैं जो प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक आय भी प्रदान करती हैं। काफी अधिक उत्पादन के बावजूद, हमारी बढ़ती आबादी की पोषण सुरक्षा को पूरा करने के लिए निकट भविष्य में सब्जी की लगभग 190 मिलियन टन प्रति वर्ष आपूर्ति करने की आवश्यकता होगी। सब्जियों पर बहुत से कीटों का आक्रमण होता है, जिसके कारण उत्पादन एवं गुणवत्ता दोनों प्रभावित होती है। कृषि रसायनों का उपयोग शत्रु तथा मित्र कीटों तथा मानव को एक समान प्रभावित करता है, जिसमें मानव इस श्रंखला के शीर्ष पर है। सब्जियों में रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग से सब्जी उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि हुई है फिर भी केवल रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से संतोषजनक कीट प्रबंध सम्भव नहीं है। उदाहरण के लिए *हेलियोथिस* एक बहुभच्छीकीट है, जो अनेक फसलों पर आक्रमण करता है। इसकी रोकथाम चुनौती बन गई है क्योंकि अनेक रासायनिक कीटनाशक के प्रति इस कीट में प्रतिरोधक क्षमता विकसित हुई है। अधिकाधिक प्रयोग से कीटों पर कीटनाशकों का असर न होने और कीटों के फिर से पैदा होने जैसी समस्याएँ पैदा हो गयी हैं। इससे कीट प्रबंधन का कार्य कठिन हो गया है। कीटनाशकों के प्रयोग से पर्यावरण प्रदूषण और सब्जियों में विषाक्त पदार्थों की मात्रा बढ़ने की समस्या खड़ी हो गई है। धीरे–धीरे अब स्पष्ट हो गया है, कि केवल रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से ही संतोषजनक कीट प्रबंधन सम्भव नहीं है। ऐसी स्थिति में कीट प्रतिरोधी प्रजातियों की खेती में प्रयोग, कीट विशेष को नियंत्रित करने वाले जैव–एजेंटों का प्रयोग, वानस्पतिक कीटनाशकों और जीवाणु समूहों पर आधारित समन्वित कीट प्रबंधन को अपनाना न केवल कारगर साबित हुआ है, बल्कि यह पर्यावरण अनुकूल भी है। फसलों में अब ऐसी अनेक प्रजातियाँ उपलब्ध हैं, जिन पर कीटों का प्रकोप कम होता है। कीट प्रबंधन के ऐसे नये तरीके निकले हैं जिनसे कीटनाशकों की आवश्यकता कम होने की सम्भावना है।

सब्जियों में कीटनाशकों के अवशेष

अधिकतम अवशेष स्तर (एम.आर.एल.) व्यापार मानक है जो उपभोक्ताओं को उत्पाद के प्रयोग से स्वास्थ्य पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है।

सारिणी : सब्जी फसलों में कीटनाशकों के इस्तेमाल की प्रतीक्षा अवधि (दिन में)

कीट नाशक	भिंडी	पत्तागोभी	बैंगन	फूलगोभी	टमाटर	मटर
मेलाथियान	3	7	1	7	–	3
फेनवेलरेट	5	10	5	3	3	–
सायपरमेथ्रीन	3	7	3	–	1	–
कार्बेरिल	–	–	25	–	30	–
कूईनोल्फोस	–	–	10	27	–	–
डिमेथोट	–	10	–	7	–	–
इमिडाक्लोप्रिड	3	–	–	–	–	–

थायोमेथोक्साम	5	–	3	–	5	–
इंडोक्सोकार्ब	–	7	–	–	5	–
स्पाईनोंसेड	–	3	–	3	–	–
एमेमेक्टिन बेंजोएट	5	3	3	–	–	–
लेफ्नेउरोन	–	14	–	5	–	–
नोवलुरान	–	5	–			

प्रत्येक देश की अपनी अधिकतम अवशेष स्तर सीमायें होती हैं। खाद्य वस्तुओं के निर्यात–आयात करने वाले देश के लिए अधिकतम अवशेष स्तर नियमों का अनुपालन आवश्यक है। यूरोपीय संघ द्वारा निर्धारित अधिकतम अवशेष स्तर को सदस्य देशों सहित भारत को भी सब्जियों के निर्यात के लिए अनुपालन करना होगा। हाल ही में अधिकतम अवशेष सीमाओं के ऊपर एंडोसल्फान, मोनोक्रोटोफोस, एसीटामिप्रिड, एसीफेट, मैन्कोजेब, थियोफेनेट, मिथाइल कार्बान्डाजिम, इत्यादि एकीकृत कीट प्रबंधन एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें फसलों को हानिकारक कीटों से बचाने के लिए किसानों को एक से अधिक तरीकों जैसे–व्यवहारिक, यांत्रिक, जैविक तथा रासायनिक नियंत्रण का इस तरह से क्रमानुसार प्रयोग में लाना चाहिए, ताकि फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीटों की संख्या आर्थिक हानि स्तर से नीचे रहे और रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग तभी किया जाए, जब अन्य अपनाए गये तरिकों से सफलता न मिले।

एकीकृत कीट प्रबंधन के उद्देश्य

1. फसल की बुवाई से लेकर कटाई तक हानिकारक कीटों के साथ–साथ मित्र कीट की लगातार एवं व्यवस्थित निगरानी रखना।
2. कीटों को उनके आर्थिक हानि स्तर से नीचे रखने के लिए सभी उपलब्ध नियंत्रण विधियों जैसे– व्यवहारिक, यांत्रिक, अनुवांशिक, जैविक, संगरोध व रासायनिक नियंत्रण का यथा योग्य प्रयोग करना।
3. कीटों के आर्थिक हानि स्तर (ई.आई.एल.) को पार कर लेने पर सुरक्षित कीटनाशकों को सही समय पर सही मात्रा में प्रयोग करना।
4. कृषि उत्पादन में कम लागत लगाकर अधिक लाभ प्राप्त करने तथा वातावरण को प्रदूषण से बचाना।

आर्थिक दहलीज़ स्तर (इकोनॉमिक थ्रेसहोल्ड लेवल या ई.टी.एल.)

आर्थिक दहलीज वह स्तर है जिस पर उपज नुकसान की लागत नियंत्रण की लागत से अधिक होती है। जब कीटों की महत्वपूर्ण संख्या/आर्थिक दहलीज़ स्तर से ऊपर या बराबर होती है, तब छिड़काव की अनुशंसा की जाती है। आर्थिक दहलीज़ स्तर के आधार पर यह निर्णय लिया जाता है कि अमुख फसल में दवाओं का छिड़काव किया जाये या नहीं ।

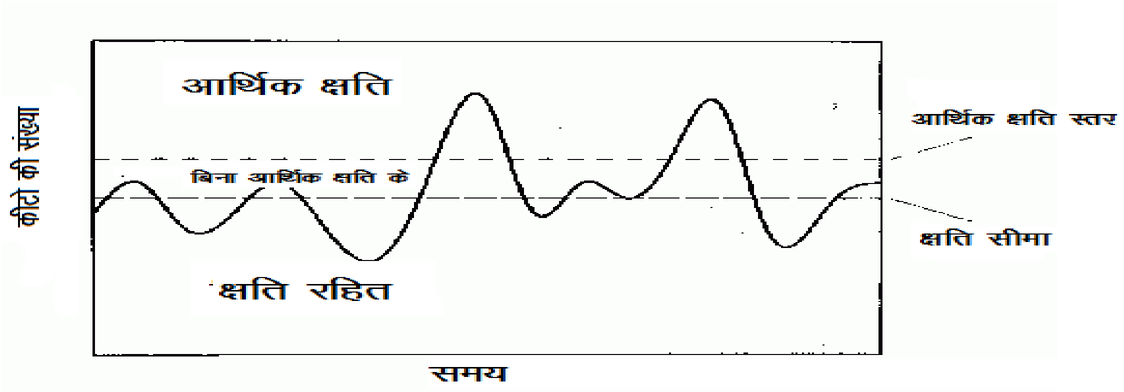

दो मुख्य कारणों से समय पर नियंत्रण आवश्यक है:

1. सब्जी फसलों की क्षति को कम करने के लिये।
2. कम से कम कीट रसायनों के द्वारा कीटों का पूर्ण रूप से नियंत्रण प्राप्त करने के लिये।

अभिलेख रखना

अभिलेख रखना कीटों की जाँच पड़ताल का एक नियमित हिस्सा होना चाहिए। फसल निरीक्षण का अभिलेख, यह इंगित करता है कि कीटों की किस स्तर पर संख्या बढ़ रही है या किस स्तर पर संख्या घट रही है या स्थिर है, ये सब जानकारी कीट रसायनों के छिड़काव करने में मदद करेंगी कि कब और कितनी मात्रा में कीट रसायन का छिड़काव किया जाये। अमुख कीट रसायन कितना प्रभावशाली है, कीट अभिलेख के द्वारा जाना जा सकता है। अभिलेख में निम्न विषयों के बारे में आवश्यक जानकारी जरूर लिखना चाहिये:

- अंडे, लार्वा/निम्फ और वयस्क कीटों की संख्या प्रति पौध का पूरा विवरण तथा दिनांक।
- लार्वा/निंफ का आकार क्या है।
- फसल में कीट की क्या स्थिति है और कीट की अवस्था (इन्स्टार) है।
- शिकारियों और परजीवी मित्र कीटों एवं शत्रु कीटों का क्या अनुपात है।
- गौण कीटों की उपस्थिति का स्तर।
- छिड़काव की स्थिति।
- हवा के बहाव की दिशा।
- फसलों का मूल्य।
- लागतःलाभ अनुपात, लाभ हानि अनुपात
- क्षेत्र में हाल ही में छिड़काव का परिणाम
- क्षेत्र में हेलीकोवर्पा के लिए प्रतिरोध स्तर

सब्जियों के उत्पादन में कीटों का बड़ा महत्व होता है, ये जहाँ परागण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, वहीं पैदावार की वृद्धि में मदद करते हैं।प्रकृति में उन कीटों की संख्या बहुत कम (पांच प्रतिशत से भी कम) है जो वास्तव में फसलों जानवरों या मानव समूह को नुकसान पहुंचाते हैं। किसान कीट को नियंत्रित करने के लिए त्वरित रसायनों का उपयोग करना पसंद करते हैं। कीट नियंत्रण हेतु एक ऐसा सुनियोजित प्रबंधन कार्यक्रम (समेकित कीट प्रबंधन) अपनाने की आवश्यकता है जो पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित तथा क्षति को नियंत्रित करने में सक्षम हो। सब्जी फसलों में कीट प्रबंधन में कीटनाशकों का चयन, जो तुलनात्मक रूप से मित्र कीटों के लिये सुरक्षित हो, प्रयोग करना चाहिए।

समेकित कीट प्रबंधन में कीटों का निरीक्षण एवं अवलोकन पद्धति का महत्वपूर्ण योगदान है। इस पद्धति के प्रयोग से सब्जियों को नुकसान करने वाले कीटों की पहचान, उनके आगमन की सूचना तथा प्रकोप के स्तर की जानकारी प्राप्त होती है, जो कीट प्रबंधन तकनीकों के क्रियान्वयन में सहायक होता है। राष्ट्रीय स्तर पर किसानों को कीटों के प्रकोप की अग्रिम चेतावनी व सूचना के प्रसार हेतु प्रयास किये जा रहे हैं। माहूँ, हीरक पृष्ठ कीट, पर्णसुरंगक कीट, अमेरिकन वालवर्म इत्यादि कीटों के प्रकोप व प्रभाव की अग्रिम सूचना उपलब्ध कराने में सहायक है।

नुकसान करने के अनुसार कीटों का वर्गीकरण

पत्तियों का रस चुसने वाले कीट जैसे– माहूँ, सफेद मक्खी, हरा फुदका आदि मुख्यतः मुलायम पत्तियों का रस चुस कर नुकसान पहुचाते हैं।

- **पत्तियों में सुरंग बनाने वाला कीट–** इस वर्ग में कई तरह के पर्ण सुरंगक, लीफ माइनर आदि आते हैं। जो पत्तियों में सुरंग बनाकर नुकसान पहुचाते हैं।
- **फलों को खाने वा छेद करने वाला कीट–** यह प्रमुख रूप से इसके अंतर्गत लेप्पिडोसटेरा व डिप्टेरा कीटों के सुंडी आते हैं।
- **तनों को काटने वाला कीट–** इसके अंतर्गत कीट शाखाओं पर हमला करने वाले विशेष रूप से हानिकारक कीट आते हैं।
- **जड़ों को काटने वाला कीट–** इसके अंतर्गत दीमक, कटुवा, सुंडी आदि भूमि में बोये गये बीज एवं भूमिगत सब्जियाँ जैसे–गाजर, मूली शलजम आदि को नुकसान पहुँचाते हैं।

पौधशाला सीमित क्षेत्र में होने के कारण देखभाल करना आसान होता है। पौधशाला तैयार करते समय खरपतवार को खेतों से हटाकर मिट्टी को बेहतर बनाना चाहिए। हल से गहराई तक जुताई करने से भी कीटों का सफाया किया जा सकता है। कीट प्रभावित क्षेत्र में जड़ को डूबोना (रूट डिप या सीडलिंग उपचार) अच्छा होता है।

सब्जियों में कीट रसायनों का संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग कैसे करें?

1. वैज्ञानिकों या कृषि विशेषज्ञ द्वारा बताई गयी दवा का ही इस्तेमाल करें।
2. कीटनाशकों के उपयोग के पूर्व तैयार सब्जियों को तोड़ लेना चाहिए और छिड़काव के उपरांत प्रतीक्षा अवधि के दिनों के बाद ही फल को उपयोग में लाना चाहिए।
3. छिड़काव या भुरकाव प्रातःकाल अथवा सायंकाल हवा की दिशा में ही करें।
4. छिड़काव या भुरकाव इस प्रकार करें कि पौधों की पत्तियों के ऊपर व नीचे दोनों ओर दवा चिपक जाये, क्योंकि अधिकतर कीट पत्तियों के निचली सतह पर रहते हैं।
5. सब्जियों में प्रमुख हानिकारक कीटों जैसे–पत्ती व फल खाने वाले फल मक्खी के कैटरपिलर के प्रकोप होने की अवस्था में फसल की निरंतर निगरानी करते रहना चाहिए तथा आर्थिक नुकसान होने की संभावना होने पर ही कीटनाशकों का छिड़काव करना चाहिए।
6. बरसात के दिनों में कीटनाशकों की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए कीटनाशकों के घोल में स्टीकर जैसे–सैन्डोविट या टिपाल 1 मिली. प्रति लीटर के घोल में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।
7. कीटनाशकों का छिड़काव अधिक धूप अथवा बदली के मौसम में नहीं करना चाहिए। यदि छिड़काव के क्षण एक घंटे के अंदर वर्षा हो गयी तो कीटनाशक धुल जाता है और कीटनाशकों का छिड़काव पुनः करना पड़ता है।
8. कीटनाशक खरीदते समय उपयोग समाप्त होने की तारीख (एक्सपाइरी डेट) जरूर देख लें कि कहीं वह पुराना तो नहीं हो गया है। बंद डिब्बा ही खरीदें जिस पर कंपनी का लेबल लगा हो।
9. आर्थिक दहलीज़ स्तर (ई.टी.एल.) और कीट प्रतिरक्षक अनुपात का ध्यान रखना चाहिए।
10. सुरक्षित कीटनाशकों को इस्तेमाल करना चाहिए। उदाहरण के तौर पर नीम आधारित एवं जैव कीटनाशकों का प्रयोग किया जाना चाहिए।
11. अगर कीट कुछ भागों में ही मौजूद है तो सारे खेत में छिड़काव नहीं किया जाना चाहिए।
12. कीटनाशक मिलाने हेतु लकड़ी का डण्डा या लोहे की छड़ी का प्रयोग करें। कीटनाशकों का घोल हमेशा खुले आसमान के नीचे बनाना चाहिए। बंद कमरे में घोल बनाने से विषैली हवा मनुष्य के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकती है।
13. डिब्बा खोलते समय चेहरा उस से दूर ही रखें कीटनाशक का इस्तेमाल डिब्बे पर लिखे तरीके से ही करें।
14. रसायनों के डिब्बों की अदला–बदली कभी न करें और घर में रिसने वाले डिब्बे को न रखें।
15. यदि लेबल उतर जाये तो उसे चिपका दें या उस पर लिख दें कि यह कौन सा कीटनाशकहै।
16. स्प्रे मशीन को अच्छी तरह जाँच लें कि कहीं रिसाव (लीक) तो नहीं हो रहा है।
17. जिस बर्तन में घोल बनाया है, उसे पशुओं व खाद्य पदार्थों से अलग रखें। घरेलू बर्तन में घोल न बनायें एवं कीटनाशकों को बच्चों की पहुँच से दूर रखे।
18. स्प्रे वाली टंकी को पूरी तरह कभी न भरें। इस से दवा के छलकने का डर रहता है। रसायन की मात्रा अच्छी तरह नाप कर ही डालें।
19. छिड़काव करते समय कुछ भी न खायें और न ही धूम्रपान करें। छिड़काव के बाद हाथ मुँह को अच्छी तरह से साबुन से धुलाई करलें।
20. हवा की उलटी दिशा में चलते हुए छिड़काव न करें वर्ना हवा में उड़ कर रसायन खुद पर गिरने लगता है।

21. छिड़काव करते समय अलग कपड़े (एपरन) पहनें व चश्मे का इस्तेमाल जरूर करें। चेहरे पर मास्क लगा कर दवा का स्प्रे करें। अगर मास्क नहीं है तो कम से कम मुँह पर कपड़ा बाँध कर स्प्रे करें। अगर आप सामान्य कपड़े पहन कर भी स्प्रे करते हैं, तो उन्हें तुरंत ही धो कर सुखा दें।
22. कीटनाशकों की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए यह ध्यान रखना चाहिये कि कीटनाशक नया हो और उसे उचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिये।
23. कीटनाशक बदल–बदल कर छिड़काव करना चाहिये अन्यथा कीटों में कीटनाशक सहन करने की क्षमता बढ़ जाती है। इस प्रकार बाद में उस कीटनाशक का प्रभाव कम हो जाता है। जब फूल पूर्णरूप से खिले हों उस समय कीटनाशक का छिड़काव नहीं करना चाहिये अन्यथा परागण करने वाले कीटों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
24. किसान ज्यादा मुनाफा कमाने के लिए कीटनाशकों के असर को खत्म होने वाले समय पर ध्यान नहीं देते और जल्द ही फसल को बाजार में बेच देते हैं। इस वजह से कीटनाशकों का जहर उनमें चिपका रह जाता है, जिससे कभी कभी उपभोक्ता की मौत तक हो जाती है।
25. कीटनाशकों का जहाँ तक हो कम से कम उपयोग करना चाहिए क्योंकि अधिक रसायनों के प्रयोग से छोटे–छोटे कीट जो कम नुकसान पहुँचाते हैं, वो प्रमुख कीट का रूप ले लेते हैं।
26. सब्जियों में समन्वित कीट प्रबंधन का महत्व और बढ़ जाता है, क्योंकि फल और सब्जी सीधे तौर पर उपभोग की जाती है। कुछ कीटनाशक ज्यादा जहरीले होते हैं या अपने जहरीले असर के लिए जाने जाते हैं, उनकी सिफारिश नहीं की जानी चाहिये।

वैज्ञानिकों और कृषि विशेषज्ञों की सलाह से रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग कर फसल के नुकसान को तत्काल प्रभाव से रोका जा सकता है। वास्तविकता यह है, कि नकली–असली कीटनाशक की पहचान, प्रतिबंधित कीटनाशकों का ज्ञान, कीटनाशकों का चुनाव तथा प्रयोग करने के लिए ज्यादातर किसान स्थानीय दुकानदारों पर निर्भर हैं जिनका पंजीयन नहीं है। वर्तमान में निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखकर कीटनाशकों के दुष्प्रभाव को कम किया जा सकता है:

- **अवरोधी एवं सहनशील किस्मों का चयन**

किसी क्षेत्र के शत्रु एवं मित्र कीटों की विविधता एवं सघनता के आधार पर अवरोधी अथवा सहनशील किस्मों का चुनाव एकीकृत कीट प्रबंधन की महत्वपूर्ण कड़ी है। इस आधार पर चयनित किस्मों में अपेक्षाकृत कम कीट लगते हैं एवं रासायनिक दवाओं की खपत में आशातीत कमी आ जाती है। यह विधि सबसे सरल, सस्ती औरे नुकसान रहित है।

- **फसल चक्र**

किसी भी प्रक्षेत्र में सब्जियों को उगाते समय उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए ताकि एक ही कुल की सब्जी को दोबारा न लगायी जा सके। इस विधि से कीटों के निरन्तर जीवन चक्र, अपेक्षाकृत संख्या एवं क्षति स्तर को कम किया जा सकता है।

- **बुआई व पौध रोपण का समय**

कीटों के प्रति फसल की अवस्था को ध्यान में रखकर फसल की बुआई तथा रोपाई के समय में परिवर्तन करके अत्यधिक नुकसान से बचाया जा सकता है। सब्जियों की बुआई व रोपाई के समय में परिवर्तन कर लाल भृंग कीट, फल मक्खी, तना एवं फल छेदक कीट के प्रकोप को कम किया जा सकता है। कद्दू वर्गीय सब्जियों की बुआई नवम्बर में करने से लाल भृंग कीट के आक्रमण से बचा जा सकता है जबकि करेला में अक्टूबर से पहले फूलने व फलने वाली किस्मों का चयन कर फल मक्खी से बचाया जा सकता है। जून के दूसरे सप्ताह में भिण्डी की बुआई करने पर फल वेधक कीट से क्षति को कम किया जा सकता है। अतः पौधों की बुआई तथा रोपाई ऐसे समय करें, जब पौधों की अवस्था एवं शत्रु कीट की निष्क्रिय अवस्था समानान्तर हो। ऐसी स्थिति में कीट

प्रतिरोधी किस्मों की खेती, कीट विशेष को नियन्त्रित करने वाले जैव–एजेंटों का प्रयोग, वानस्पतिक कीटानाशकों और बैक्टीरिया और वायरस समूहों पर आधारित समन्वित कीट प्रबंधन न केवल कारगर साबित हुआ है, बल्कि यह पर्यावरण अनुकूल भी है। उपरोक्त के अलावा यहाँ इस बात का भी उल्लेख किया जाना चाहिए कि भारत उन देशों में नहीं है, जहाँ कीटनाशकों के प्रयोग का स्तर बहुत ऊँचा है। इसके अलावा यह तथ्य भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में कीटों का प्रकोप एक गम्भीर समस्या है और उष्ण कटिबंधीय जलवायु में कीटनाशकों का 'बायोडेग्रिडेशन' के चलते गल कर मिट्टी में समाहित हो जाने की प्रक्रिया भी तेज होती है। उर्वरकों और कीटनाशकों के विवेकपूर्ण प्रयोग की आवश्कता को आई.पी.एम. के माध्यम से पूरा किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य पादप संरक्षण के ऐसे तरीकें विकसित करना है, जो सस्ते, पर्यावरण की दृष्टि से सुरक्षित और फसल चक्र को सुसंगत बनाकर उत्पादन को तेजी से बढ़ाने में सहायक हों।

उपरोक्त सभी तकनीकों का सब्जियों में समय से क्रियान्वयन सुनिश्चित करके, कीट प्रबंधन में कीटनाशकों के प्रयोग को कम करना ही, हमारा अहम् उद्देश्य है। इसे और अधिक प्रभावी बनाने हेतु विशेषज्ञों और प्रसार–कर्मियों को समय–समय पर प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है, जिससे प्रसार कार्यो के लिए संचालित किये जा रहे प्रदर्शनों, प्रशिक्षणों तथा साहित्य में कीट प्रबंधन तकनीकों का समावेश कर सब्जी की उत्पादकता व गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकें। सब्जी के निर्यात हेतु, आदर्श मानक स्तर को प्राप्त करने में उपरोक्त विधियाँ उत्पादकों के लिये मार्ग–दर्शन में सहायक होगी।

हिंदुस्तान को छोड़कर दूसरे मध्य देशों में ऐसा कोई अन्य देश नहीं है, जहाँ कोई राष्ट्रभाषा नहीं हो।

– सैयद अमीर अली मीर

उपेक्षित एवं मरू भूमि के लिये वरदानः सब्जी नागफनी

डी.आर. भारद्वाज, टी. चौबे, के.के. गौतम, ए. के. सिंह, डी.पी. महारणा एवं संदीप कुमार
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

भारतवर्ष में बहुत ज्यादा उपेक्षित (147 मिलियन हेक्टेयर) एवं मरू (96.4 मिलियन हेक्टेयर) भूमि का क्षेत्रफल है। इस विषम वातावरण में भी प्रकृति ने अनेकों बहुपयोगी वनस्पतियों को पुष्पित, पल्लवित व अनुकूलन का अवसर प्रदान किया है। इन वनस्पतियों में कैक्टेस सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। कैक्टेसी कुल में लगभग 130 वंश व 1,500 प्रजातियाँ पायी जाती हैं, जो मुख्यतः नई दुनियाँ की वंशज है। सब्जी नागफनी (*ओपन्शिया* एवं *नोपालीया* प्रजाति) के मुलायम नये फल जिसे 'नोपालीटास' कहते हैं, का व्यापक उपयोग मैक्सिको एवं टेक्सास में ताजी हरी सब्जी एवं सलाद के रुप में किया जाता है। इसी प्रकार उपस्थापित *ओपन्शिया* प्रजाति जिसे प्रिकली पियर्स कहते हैं, के फल काफी मीठे व अधिक आय प्रदायी हैं। इनके फल यू.एस.ए., चिली, मेक्सिको, ब्राजील, उत्तरी अफ्रीका, स्पेन इटली एवं ग्रीस में अन्य फलों की तरह बेचा जाता है। मेक्सिको, संयुक्त राज्य अमेरिका, स्पेन, इटली एवं उत्तरी अफ्रीका में मानव जीवन के आहार का एक प्रमुख अंग है। आज के परिदृश्य में इस बहुमूल्य सब्जी को भारतीय वातावरण में स्थान देना आवश्यक है।

सब्जी नागफनी (*ओपन्शिया फाइकस इण्डिका*) की पत्तियों में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन नहीं मिलता है, लेकिन शुष्क पदार्थ की ज्यादा होने के कारण वर्षा आधारित क्षेत्रों में इसकी खेती की जा कसती है। ब्राजील में इसकी खेती जानवरों के लिए चारा हेतु उगाया जाता है। पत्तियों पर विद्यमान काटों को जलाकर समाप्त करने के बाद जानवरों को खिलाते हैं। अनुपयोगी जमीन पर इसकी खेती आसानी से की जा सकती है। कैक्टस में विटामिन, शर्करा, खनिज लवण एवं अन्य अमिनों अम्ल प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। इनके उपयोग से कोलेस्ट्राल से ग्रसित व्यक्ति को छुटकारा मिलती है। प्रिकली पीयर' यूरोपीय देशों की सब्जियों में एक महत्वपूर्ण घटक है। सामान्यतः मैक्सिको इटली दक्षिण अफ्रीका और ग्रीन प्रिकली पीयर के प्रमुख निर्यातक देश हैं। सब्जी के अलावा इसकी अन्य उपयोगिताओं में सलाद, जैम, सिरप, एल्कोहलिक पेय पदार्थ, फल–जूस आदि हैं। इसकी कोमल पत्तियों से साबुन और बीजों से दवायें बनाई जाती हैं।

जलवायु

सब्जी नागफनी की खेती के लिए भारत की मरू भूमि वाली विभिन्न जलवायु क्षेत्र सबसे उत्तम माना जाता है, क्योंकि सब्जी नागफनी मुख्यतः रेतीली क्षेत्र का पौधा होने के कारण सूखा अवरोधी गुणों से भरपूर होता है। जिन क्षेत्रों में 800 मिली. लीटर से ज्यादा वर्षा होती है, उन क्षेत्रों में इसकी खेती नहीं की जा सकती है, क्योंकि ऐसे क्षेत्रों में कीड़ों एवं रोगों का प्रकोप बहुत ज्यादा होता है। सब्जी नागफनी के विकास के लिए गर्मी में ज्यादा उपयुक्त वातावरण मिलता है, क्योंकि कभी–कभी 300–600 मिली. मीटर तक की वर्षा गर्मी में भी हो जाती है। तेज गर्मी के दिन और ठण्डा व शुष्क सर्दी जहाँ पर तापमान –5.0 डिग्री सेल्सियस से नीचे न आता हो, इसकी खेती के लिए उपयुक्त है। विकास एवं वृद्धि के लिए दिन गर्म तथा रात ठण्ड होनी चाहिए।

भूमि एवं भूमि की तैयारी

नागफनी के लिए बलुई या बलुई दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त पानी जाती है। इसकी खेती सफलतापूर्वक भारी मिट्टी में भी की जा सकती हैं, बशर्ते उसमें जीवांश के साथ–साथ जल निकास का उत्तम प्रबन्ध हो। यह बताना आवश्यक है कि इसकी खेती क्षारीय मिट्टी में भी की जा सकती है, जिनमें कैल्शियम एवं पोटैशियम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो। कंकरीली एवं पथरीली जमीन विशेषतः पहाड़ों की ढलवा जमीन इसकी खेती के लिए उपयुक्त है। अतः

यही कहा जा सकता है कि किसी प्रकार की मृदा जिस पर अन्य फसलें उगाना मुश्किल है, कैक्टस के लिए सबसे उपयुक्त मानी जाती है।

पौध प्रवर्धन एवं रोपण

सब्जी नागफनी स्वपरागित व पर–परागित दोनों प्रकार के होते हैं। इसका प्रवर्धन बीज एवं वर्धीय दोनों द्वारा किया जाता है। सामान्यतः प्रवर्धन हेतु 1.0 वर्ष पुरानी पत्तियाँ जिसे ''पैड'' कहते हैं, का उपयोग किया जाता है। पत्तियों को उपर सीधे रखकर प्रवर्धन करना उत्तम रहता है। प्रवर्धन–पूर्व पत्तियों को एकत्रित कर 4–6 सप्ताह तक छाया में रखना चाहिए। इसके बाद ही प्रसारण हेतु प्रयोग करना चाहिए। इस विधि में पत्ती के उपरी भाग को सीधे उपर रखते हैं तथा कटे निचले भाग को एक तिहाई जमीन के अन्दर डाल देते हैं और दो तिहाई उपर की तरफ होता है।

सब्जी नागफनी का खाने योग्य ''पैड''

पत्तियों को लगाने के पूर्व किसी फफूँद नाशक रसायन से शोधित कर लेना चाहिए, जिससे मृदा जनित जड़ सड़न रोगाणुओं से मुक्ति मिल सके। पत्ती रोपण के तुरन्त बाद प्रत्येक थाले में 8.0–10.0 लीटर पानी देना आवश्यक है। इसके बाद थाले की जमीन को तब तक नम बनाये रखना चाहिए, जब तक उसमें नवीन पत्तियाँ निकलना प्रारम्भ न हो जायें। प्रिकली पीयर को ऊँची मेड़ों पर समतल जगह पर लगाना चाहिए। इसकी जड़ें 30.0–35.0 सेमी. गहराई तक होती है, जहाँ जड़े तेज विकास करती हैं। अब जड़ों के पास बालू, नदी के किनारे की मिट्टी, गोबर या कम्पोस्ट की खाद देना चाहिए।

किस्में

सब्जी फसल के लिए सबसे उत्तम प्रभेद 'क्लोन–1308' है। इसकी "इनर्मिस" प्रजाति काँटे रहित है, जिससे इसकी खेती व्यापक पैमाने पर की जाती है।

रोपण समय व दूरी

नागफनी की पत्तियों का रोपण पूरे वर्ष किया जा सकता है, लेकिन सितम्बर–अक्टूबर व फरवरी–मार्च का महीना सबसे उत्तम माना जाता है। रोपण दूरी का निर्धारण प्रजातियों के गुण एवं उनके उगाने के उद्देश्य पर आधारित होता है। सामान्यतः इसका रोपण 80–100 सेमी. के अन्तराल पर बनी कतारों में 30–40 सेमी. की दूरी पर रोपण की जाती है। इतनी दूरी पर रोपण करने पर एक हेक्टेयर क्षेत्रफल हेतु 25,000–40,000 पौधों की आवश्यकता होती है।

पोषक तत्व प्रबन्धन

सब्जी नागफनी की अच्छी पैदावार प्राप्त करने के लिए पौधों को प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करना चाहिए। खेत की अन्तिम जुताई के समय 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी प्रकार सड़ी गोबर की खाद या वर्मी कम्पोस्ट मिलाकर पाटा चला देना चाहिए। अगर खेत में नत्रजन की प्रचुरता है, तो पौधों से प्राप्त होने वाले उत्पाद में क्रूड प्रोटीन भी ज्यादा होती है। सामान्यतः सब्जी नागफनी में 40:60:60 के अनुपात में नत्रजनःफास्फोरसःपोटाश देना उत्तम रहता है। प्रयोगों में यह पाया गया है कि अगर कैक्टस में सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, मैग्नीज, कोबाल्ट, क्लोरिन आदि की उपलब्धता बढ़ा दी जाये तो अच्छे क्लेडोड विकसित होते हैं। इतना ही नहीं सूक्ष्म तत्वों के सन्तुलन से ठण्डे मौसम में भी क्लेडोड प्रचुर मात्रा में निकलते हैं।

जल प्रबन्धन

सब्जी नागफनी सूखा सहने की अपार क्षमता रखता है। अगर 300–600 मिली. मीटर तक वर्षा एक बराबर पूरे वर्ष होती रहे तो, इसको अलग से गर्मी में भी पानी देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। अगर वर्षा कम होती है और वितरण भी छिट–पुट रहता है, तो 2–3 बार सिंचाई करने की आवश्यकता पड़ेगी।

वह भी जब फल का प्रारम्भिक विकास व फल मोटा हो रहा हो, तो उपज बढ़ जाती है। इससे फल में फटने की प्रवृत्ति नहीं होती है। चूँकि नागफनी की जड़ें काफी उथली होती है, जिससे हल्की सिंचाई की बार–बार आवश्यकता पड़ती है। जहाँ कम वर्षा हो, भारी मिट्टी हो या जल निकास अच्छा न हो, वहाँ पर ड्रीप व स्पिंकलर से सिंचाई फायदेमंद रहता है। जहाँ मिट्टी ढलुआ, कमजोर या भारी हो, सामान्यतः ड्रिप या स्प्रिंकलर के द्वारा यह कार्य किया जा सकता है।

कटाई–छँटाई

नागफनी की खेती में कटाई–छँटाई का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है। यह प्रक्रिया सामान्यतः पौधों को उचित आकार देने के लिए किया जाता है, जिससे पौधों के बीच प्रकाश के लिए प्रतिस्पर्धा न हो। इसके अलावा कटाई–छँटाई से उपज में वृद्धि होती है। फलों की गुणवत्ता में सुधार होता है और पौधों में स्फूर्ति आ जाती है। कटाई–छँटाई का सबसे उपयुक्त समय तब है, जब पौधों से पत्तियों एवं फलों की तुड़ाई कर ली गयी हो तथा पौधों की वृद्धि न हो रही हो। पहले तो नीचे लटकने वाली व खराब पत्तियों को काटकर बाहर कर देना चाहिए। अगर वृद्धिकाल में पौधों की कटाई–छँटाई की जा रही हो, तो उपज में भारी कमी आयेगी।

उपज

(1) सब्जी उपज

पौध रोपण के 2–3 महीने बाद क्लेडोड की कटाई की जा सकती है, क्योंकि इस समय क्लेडोड मुलायम एवं रसीले होते हैं। सामान्यतः 20–25 सेमी. लम्बे व 90–100 ग्राम वजन के क्लेडोड उत्तम होते हैं। उत्तम प्रभेद 'क्लोन–1308 द्वारा प्रतिवर्ष 80–90 टन प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है। दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका एवं संयुक्त राज्य अमेरिका में इसको ज्यादातर सब्जी के लिए ही उपयोग करते हैं।

(2) फल उपज

सब्जी नागफनी के फलों की तुड़ाई पौध स्थापन के 3 वर्ष के बाद प्रारम्भ होती है। इसके पौधे से 12–20 वर्ष तक अच्छी उपज मिलती रहती है। सामान्यतः फल 1–2 वर्ष पुरानी क्लेडोड्स प्राप्त होते हैं। दूसरी सब्जियों के व्यवहार के विपरीत इसमें पूर्ण फल का विकास तब होती है जब पहली बार उसमें पुष्पन होता है। परागण एवं निषेचन के बाद पूरी थैलीनुमा फलबीजों से भर जाती है। अच्छी प्रकार स्थापित पौध विन्यास 4 × 2 मीटर से लगभग 10–40 टन/हेक्टेयर उपज मिल जाती है। अच्छी सिंचाई व्यवस्था व पोषक प्रबन्धन से 1 वर्ष में 2 फसलें (मार्च–जुलाई एवं अक्टूबर–दिसम्बर) ली जा सकती है। चीली देश में ''टूना'' उत्पादन कम संरचना खर्च पर ज्यादा लाभदायक है।

(3) चारा उपज

सब्जी फसल के रुप में विक्रय न होने की स्थिति में पशुओं के लिए नागफनी चारा का काम करता है। इससे दूध की गुणवत्ता बढ़ती है एवं सुगन्ध भी बढ़ जाता है। घी का रंग भी बढ़ जाता है। पशुओं को कैक्टस खिलाकर दूध व दूध उत्पादन बाजार में आता है, तो उन्हें ज्यादा मूल्य प्राप्त होता है। अतः प्रिकली–पीयर एक अद्भुत चारा है। मैक्सिको एवं दक्षिण पश्चिम टैक्सास में '' प्रोपेन टार्चेज'' जिसे ''पीयर बर्नर्स'' कहा जाता है, काँटों को समाप्त करने के लिए किया जाता है।

फल विगलन

सामान्य एवं प्रिकली पीयर पत्ती में 30 की संख्या तक फल बनते हैं। अगर सभी फलों को पकने के लिए छोड़ा जाये, तो फल का आकार एवं गुणवत्ता दोनों खराब हो जाती है। औसतन अच्छी गुणवत्तायुक्त फल प्राप्त करने के लिए 10–15 फल/पत्ती छोड़ना उपयोगी है। फल कलिका व फूल पुष्पन के बीच का समय फल विगलन के लिए उत्तम माना जाता है। फल विगलन ऐसे होना चाहिए कि पास के अन्य फल प्रभावित न हों।

तुड़ाई एवं हस्तान्तरण

चूँकि क्लेडोड काफी कोमल होते हैं, अतः तुड़ाई व हस्तानान्तरण के समय बहुत ध्यान देने की आवश्यकता होती है। काँटों से बचाव के लिए तुड़ाई करते समय हाथ में दस्ताने का उपयोग करना

चाहिए। तुड़ाई के बाद काँटों को घास आदि पर रगड़कर या उनकी कठोर वस्तु पर रखकर धुलाई या चक्रमण करना चाहिए। धुलाई या चक्रमण कर रहे रोयेंदार ब्रुश की सहायता से करना चाहिए। काँटा रहित फलों की पैकिंग ''अण्डा ट्रे'' जैसी संरचना में रख कर भण्डारण किया जाता है।

भण्डारण

तोड़े गये क्लेडोड को 10 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान पर 10–12 दिनों तक भण्डारित किया जा सकता है। कम तापमान होने के कारण भण्डारित क्लेडोड में शीत क्षरण की सम्भावना ज्यादा रहती है। अगर तापमान 5 डिग्री सेल्सियस से नीचे आ जाता है, तो क्लेडोड के उत्तकों में अम्लता में तेजी से वृद्धि होती है। इसी प्रकार तापमान 20 डिग्री सेल्सियस से अधिक होने पर भण्डारित क्लेडोड के ऊत्तकों की अम्लता घटती है।

गाँव के खेत खलिहान बड़े हो गये हैं शायद
अपने पैरों पर खड़े हो गये हैं शायद
अब ये, उन छोटे–छोटे पौधे को नही लगाते है
अब तो ये सिर्फ ऊँची ऊँची मकान सजाते हैं।
जहाँ थी कभी खुशबू सत्तू की इनके मेढ़ों पर
अब वहाँ पिज्जा बर्गर के रैपर पाये जाते हैं
शहरीकरण के इस दौर में यह भी ऐरे गैरे हो गए है शायद
गाँव के खेत खलिहान बड़े हो गये हैं शायद

सब्जी उत्पादन में नील–हरित शैवालों की उपादेयता

ऋषि कुमार शर्मा[1] एवं अच्युत कुमार सिंह[2]

[1]सुधाकर महिला पी.जी. कालेज, पाण्डेयपुर, वाराणसी–221 002, उत्तर प्रदेश
[2]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

धान–गेंहूँ जैसी पारम्परिक फसलों की अपेक्षा सब्जियों का उत्पादन किसानों के लिए हमेशा से लाभप्रद रहा है, परन्तु मृदा में पोषक तत्वों की अपर्याप्त आपूर्ति छोटे किसानों के लिए इस क्षेत्र में एक बड़ी बाधा है। पोषक तत्वों की बाह्य आपूर्ति हेतु विभिन्न प्रकार के महँगे रसायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग सब्जी किसानों की आर्थिक समस्या का मुख्य कारण है। लम्बे समय तक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति क्षीण होती है, साथ ही यह ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन परत की कमी व पानी का अम्लीकरण जैसी विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्या का मूल कारण है। कृषि क्षेत्र में विभिन्न रसायनिक उर्वरकों के अंधाधुंध उपयोग से जुड़े पर्यावरण प्रदूषण का परिहार, दीर्घकालिक स्थिरता तथा सुरक्षित व स्वस्थ भोजन की बढ़ती माँग के मद्देनजर वैश्विक रूप से जैविक खेती एक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में सामने आयी है। सब्जी उत्पादन हेतु आज के बदलते परिवेश में जैव उर्वरकों का प्रयोग जागरूक सब्जी उपभोक्ताओं के साथ ही किसानों के लिए भी लाभप्रद है। सब्जी किसानों के आर्थिक लाभ व पर्यावरणीय संरक्षण को दृष्टिगत रखते हुए नील–हरित शैवालों का संपोषणीय कृषि हेतु विभिन्न रूपों में प्रयोग अत्यन्त श्रेयस्कर है।

नील–हरित शैवाल

विभिन्न जैव उर्वरकों में साइनो बैक्टीरिया जिन्हें सामान्यतया नील–हरित शैवाल कहा जाता है, का एक प्रमुख स्थान है। यह एक पर्ण–हरित (क्लोरोफिल) रखने वाला अकेन्द्रिक सूक्ष्म जीव है, जो अपनी अपार अनुकूलनशीलता के कारण विविध स्थानों पर पाया जाता है। नील–हरित शैवालों को जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया के लिए मुख्य रूप से जाना जाता है।

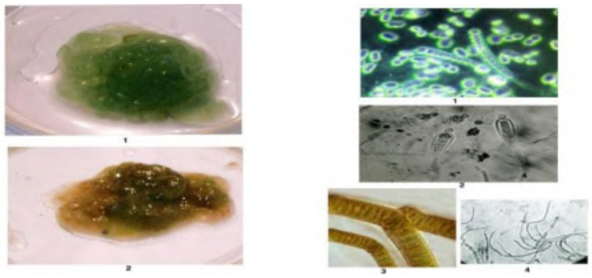

शैवाल का समूह वं माइक्रोस्कोपिक संरचना

नील–हरित शैवाल द्वारा नाइट्रोजन का स्थिरीकरण

नाइट्रोजन मिट्टी में पाया जाने वाला एक वृहद् उपयोगी पोषक तत्व है, जिसकी पौधों को अधिक मात्रा में आवश्यकता पड़ती है। हवा में लगभग 78 प्रतिशत नाइट्रोजन मुक्त अवस्था में उपस्थित रहने के बावजूद पौधे इस स्वतंत्र रूप में नाइट्रोजन को अवशोषित नहीं कर सकते हैं, अपितु इसके स्थान पर नाइट्रेट, नाइट्राइट या अमोनिया जैसे संयुक्त स्वरूप में नाइट्रोजन का प्रयोग करते हैं। यही नाइट्रोजन पौधों की कोशिकाओं में प्रोटीन, न्यूक्लिक एसिड, क्लोरोफिल व एजांइम जैसे विभिन्न कोशिकीय पदार्थों का मुख्य घटक बनता है। खेतों में लगातार एक प्रकार की फसल लगाने के फलस्वरूप मृदा में अक्सर नाइट्रोजन की कमी हो जाती है, जिसे पूरा करने के लिए बाहर से यूरिया इत्यादि रासायनिक खाद से नाइट्रोजन प्रदान किया जाता है। लम्बे समय तक इसे रासायनिक उर्वरक का अत्यधिक प्रयोग पर्यावरण के लिए हानिकारक होता है। नील–हरित शैवाल जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण प्रक्रिया के माध्यम से वायु में उपस्थित मुक्त नाइट्रोजन को अपने नाईट्रजिनेज एंजाइम की मदद से पौधों के लिये उपयोगी नाइट्रोजन के संयुक्त स्वरूप में बदल देते हैं। यह मृदा में स्थिरीकरण के माध्यम से 20–30 किग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजनको अनुपूरित करने में

सक्षम होते हैं। इस कारण नील–हरित शैवालों को किसान मित्र सूक्ष्म जीव माना जाता है।

नोस्टॉक समूह का नील–हरित शैवाल मिट्टी में आसानी से उपलब्ध होने वाला सदस्य है जिसमें त्वरित वृद्धि व पर्याप्त नाइट्रोजन स्थिरीकरण की क्षमता पायी जाती है। नोस्टॉक का हरी खाद के रूप में अकेले व कुछ मात्रा में यूरिया के साथ प्रयोग टमाटर के पौधों के विकास में प्रभावशाली पाया गया है। इस नील–हरित शैवाल के प्रयोग से टमाटर के पौधों की ऊँचाई में 85.8 प्रतिशत तक वृद्धि पायी गयी है जिसके कारण टमाटर के पौधे के शुष्क व ताजा भार में बढ़ोत्तरी सम्भव है। *कैलीथ्रीक्स* नामक नील–हरित शैवाल के प्रभाव से सलाद व मिर्च की पैदावार में वृद्धि पायी गयी है।

नील–हरित शैवालों द्वारा अतिरिक्त कोशिकीय उत्पाद का प्रभाव

नाइट्रोजन स्थिरीकरण के साथ ही नील–हरित शैवाल मिट्टी में उपलब्ध फास्फोरस के स्तर को भी बढ़ाते हैं। नील–हरित शैवाल मिट्टी में अपनी उपापचय प्रक्रिया के द्वारा उत्पन्न महत्वपूर्ण रिसाव गौड़ चयापचय के रूप में चिपचिपे पौलीसैकेराइड्स उत्पन्न करते हैं, जो खुद इन सूक्ष्म जीवों को जल शून्यता की स्थिति व रासायनिक पीड़कनाशियों के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करता है। शैवालीय पौलीसैकेराइडस मृदा कणों के एकत्रीकरण के द्वारा मिट्टी की संरचना व संरध्रता के साथ ही जल संग्रह क्षमता में वृद्धि करता है। शैवालीय पौलीसैकेराइटस की अधिक मात्रा मिट्टी में उत्पन होने वाली कई तरह की घास व खरपतवार के उत्पन्न होने की सम्भावना को कम करती है। नील–हरित शैवाल पौधों के लिए लाभकारी विभिन्न प्रकार के गौड़ चयापचय की एक विस्तृत श्रृंखला उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं, जो पौधों में कई जीवाणुओं व फफूँद द्वारा उत्पन्न रोगों के जैविक नियंत्रण में सहायक होता है।

प्रयोगशाला के अनुभव के आधार पर नील–हरित शैवाल के अर्क पौधों को नुकसान पहुँचाने वाले कुछ सूत्रकृमियों तथा *फ्यूजेरियम* जैसे कुछ फफूँद के नियंत्रण हेतु कारगर साबित हुआ है। *ओसुलाटोरिया* व *फोरमीडियम* जैसे नील–हरित शैवाल की प्रजातियाँ, जो सामान्यतया नाइट्रोजन स्थिरीकरण नहीं करते हैं, बल्कि उनके अर्क के प्रयोग द्वारा आलू की पैदावार में वृद्धि देखी गयी है। इसका कारण नील–हरित शैवाल द्वारा उत्पन्न किये गये पौधों के विकास को बढ़ावा देने वाले पदार्थ जैसे–पादप हारमोन्स (आक्जीन व साइटोकाईनीन), शर्करा, एमीनो एसिड तथा विटामिन के प्रभाव को पाया गया है। नील–हरित शैवाल के प्रभाव से पौधे की जड़ सम्बन्धित विकास के मापदण्डों जैसे– जड़ की लम्बाई, सूखे व ताजे में महत्वपूर्ण वृद्धि देखी गयी है। पौधों की जड़ों में इस प्रकार की वृद्धि मिट्टी से अधिकाधिक जल व पोषक तत्व अवशोषित करने में सहायक होती है।

शैवालीय अर्क का बीज अंकुरण पर प्रभाव

विभिन्न व्यवहारिक अनुप्रयोगों से ज्ञात होता है कि यदि प्रकृति से सीधे प्राप्त लाभकारी नील–हरित शैवाल के अर्क का प्रयोग बुआई से पूर्व बीजों पर किया जाये तो उनकी सुषुप्तावस्था जल्द समाप्त होने के साथ ही अंकुरण प्रक्रिया भी तेज होती है। खीरा व कद्दू वर्गीय सब्जियों के बीजों पर *वेस्टिएलोपिल्स थ्रोलीफिका* नामक नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले हेटरोसिस्ट्स नील–हरित शैवाल के प्रयोग द्वारा पौधों के विभिन्न वांछित गुणों में सुधार के साथ ही उत्पादन दर में भी वृद्धि पाया गया है।

प्रयोगशाला में नील–हरित शैवाल का सब्जियों के पौधों पर प्रयोग

प्रयोगशाला में प्राप्त अनुभवों द्वारा मिर्च, भिंडी, मटर, तरबूज, खरबूजा, खीरा, लौकी व बीन्स की पत्तियों के क्षेत्रफल व पौधों की ऊँचाई पर नील–हरित शैवाल के प्रयोग का 30–35 दिनों के भीतर सकारात्मक प्रभाव पाया गया है।

नील–हरित शैवाल द्वारा बंजर भूमि सुधार

माइक्रोकालेउस, साइटोनीसा, नोस्टॉक, सिलिंड्रोस्पर्मम, एनाबिना व आलोसाइरा जैसे विभिन्न

नील–हरित शैवालों की प्रजातियों का उपयोग हरी खाद नमकीन व ऊसर भूमि के सुधार एवं पोषक तत्व पुनर्ग्रहण के लिए किया गया है। नील–हरित शैवाल द्वारा मिट्टी का पी.एच. मान सामान्य सीमा तक कम किया जा सकता है जबकि जल धारण क्षमता और विनिमेय कैल्शियम के स्तर को बढ़ाया जा सकता है। इस तरह के प्रयासों से बंजर व ऊसर भूमि को मात्र एक से दो वर्षों में ऊपजाऊ भूमि में रूपान्तरित कर, उस पर विभिन्न सब्जियों सहित अन्य फसलें भी उगाई जा सकती हैं।

जैविक खाद के रूप में नील–हरित शैवाल का उत्पादन कैसे करें?

नील–हरित शैवाल को जैविक खाद के रूप में बड़ी आसानी से पॉलीथीन से ढके छिछले गड्ढों या सीमेन्ट के टैंकों में मिट्टी व पानी भरकर 15–20 दिनों के भीतर तैयार किया जा सकता है। यह प्रक्रिया अत्यन्त सरल व सस्ती है जिसके माध्यम से किसान अपने प्रयोग के साथ–साथ व्यवसायिक उद्देश्य से भी नील–हरित शैवालों का जैविक खाद के रूप में उत्पादन कर सकता है। नील–हरित शैवाल पौधों को नाइट्रोजन व अन्य आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने वाले एक प्रभावी व पर्यावरण हितैषी सूक्ष्म जीव हैं, जो मृदा सम्बर्धन के साथ ही पौधों के विकास में भी सहायक होते हैं। इन्हें आसानी से भारतीय परिवेश में कृषि हेतु विभिन्न पोषक तत्वों के अक्षय संसाधन के रूप में अंगीकृत किया जा सकता है।

अब इन पर हल की गुदगुदी नही होती
अब जेसीबी का प्रहार होता है।
कीड़ों को अब आश्रय भी नही मिलता
अब इनका बड़ी बेरहमी से संहार होता है।
अपने इस उन्नति से ये चौड़े हो गये हैं शायद।
गाँव के खेत खलिहान बड़े हो गये हैं शायद।

सब्जियों की जैविक खेती

एस.के. सिंह, राम चन्द्र, एस.एन.एस. चौरसिया, राघवेन्द्र प्रताप सिंह एवं संतोष कुमार सिंह[1]

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

[1]राजकीय महाविद्यालय, जक्खिनी, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

सब्जियाँ मानव पोषण में खनिज लवण तथा विटामिन्स के मुख्य स्रोत हैं। सब्जियों का निर्धारित मात्रा में प्रतिदिन सेवन हमें स्वस्थ रहने तथा विभिन्न बीमारियों से बचाव में सहायक होता है। रासायनिक उर्वरकों तथा कृषि रक्षा रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग से इनके हानिकारक अवशेष सब्जियों में बहुतायत में मिलने लगे है जिसके परिणामस्वरूप मनुष्यों तथा पशु–पक्षियों में तरह–तरह के रोग एवं विकार उत्पन्न होने की सम्भावना तथा वातावरण प्रदूषण की समस्या भी बढ़ती जा रही है। रासायनिक उर्वरकों के असन्तुलित प्रयोग एवं जैविक खाद के नगण्य उपयोग के कारण भूमि में द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होने लगी है जिससे न केवल फसलों की पैदावार में गिरावट आयी है बल्कि विभिन्न कृषि उत्पादों की गुणवत्ता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। जैविक खेती अनुपालन पद्धति फसल उत्पादन की वह पद्धति है जिसमें रासायनिक उत्पादों जैसे–रसायनिक खाद, कीटनाशक, खरपतवार नाशी, रोग रक्षा रसायन इत्यादि का प्रयोग न करके जैविक/कार्बनिक पदार्थों जैसे–कार्बनिक खाद, जैव खाद, हरी खाद, जैविक कीटनाशक एवं फसल चक्र के प्रयोग तथा स्थानीय संसाधनों का समुचित उपयोग को बढ़ाने का उद्देश्य रखता है। जैविक खेती तकनीक में जैविक खाद/उर्वरक, दलहनी फसलें, हरी खाद, फसल अवशेष, जीवाणु खाद, केचुआ खाद, फसल चक्र द्वारा पोषण प्रबंधन तथा कीट एवं बीमारियों के जैविक नियंत्रण, जल प्रबंधन, पशु धन प्रबंधन सम्मिलित है। इन परिस्थितियों में सब्जी उत्पादन में जैविक खेती की विधि को अपनाकर न केवल गिरते हुए मृदा स्वास्थ्य एवं वातावरण प्रदूषण की समस्या को कम कर सकते है बल्कि मनुष्यों की पोषण सुरक्षा को भी सुनिश्चित कर सकते हैं। जैविक खेती की तकनीक भूमि की उर्वरता एवं फसलोत्पादकता को लम्बे समय तक स्थिर बनाए रखने के साथ–साथ मृदा की भौतिक रासायनिक तथा जैविक गुणों में सुधार करते हैं।

जैविक खेती के प्रमुख चरण

जैविक खेती में मुख्यतः तीन चरण होते हैः

(1) जैविक परिवर्तन

(2) जैविक कृषि प्रबंधन एवं

(3) जैविक प्रमाणीकरण

जैविक परिवर्तन

प्रमाणीकृत जैविक खेती में जैविक कृषि प्रबंधन शुरू करने के समय से लेकर वास्तविक जैविक फसल उत्पादन के प्रमाणीकरण का 'सर्टिफाइड लोगों' प्राप्त होने के बीच के समय को परिवर्तन अवधि कहते हैं। यह अवधि एक–तीन वर्ष तक की हो सकती है। वार्षिक फसलों के लिए परिवर्तन अवधि एक वर्ष एवं लम्बी अवधि वाली फसलों तथा बागवानी पौधों के लिए दो–तीन वर्ष होती है। यह अवधि इस बात पर भी निर्भर करती है कि जैविक पद्धति अपनाने से पूर्व खेत में रासायनिक खेती की अवधि कितनी रही है अथवा उसकी मात्रा क्या रही है। सफल जैविक खेती में परिवर्तन हेतु जैविक मानकों की जानकारी, खेतों की उर्वराशक्ति एवं जैविक खेती में प्रयुक्त होने वाले संसाधनों व कीट व्याधि नियंत्रण का ज्ञान होना आवश्यक है। जैविक बदलाव की सावधानीपूर्वक रूपरेखा तैयार करते समय स्थानीय वातावरण के अनुरूप फसलों का चुनाव, उपयुक्त फसल चक्रों का चुनाव आदि को ध्यान में रखना चाहिए। खेती से सम्बन्धित सभी अभिलेखों का सुचारू रूप से रख–रखाव करना चाहिए।

जैविक कृषि प्रबंधन

प्रमाणीकृत एवं व्यवसायिक जैविक खेती करने के लिए जैविक खेती के विभिन्न आदानों तथा घटकों में प्रयुक्त होने वाले सभी उत्पादों का उपयोग जैविक उत्पादन के नियमों के अनुसार ही होना चाहिए।

(क) मृदा उर्वरता प्रबंधन

जैविक खेती में मृदा की उर्वराशक्ति बनाये रखते हुए पौधों को पोषक तत्वों की आपूर्ति हेतु विभिन्न जैविक खादों जैसे–गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद, वर्मीकम्पोस्ट, नाडेप कम्पोस्ट, हरी खाद, जैव उर्वरक आदि का प्रयोग करते हैं। उपयुक्त फसल चक्र एवं बहु फसल प्रणाली भी मृदा को स्वस्थ एवं उर्वर बनाये रखने में सहायक होते हैं। फसलों के अवशेष, जानवरों के अवशेष (हड्डी का चूरा, मछली के अवशेष), विभिन्न प्रकार की खलियाँ (नीम, करंज,सरसों इत्यादि), गायों के सिंग से तैयार बायोडायनामिक खाद का भी प्रयोग किया जाता है। इनके अतिरिक्त गोमूत्र तथा कुछ तरल जैविक खाद का भी प्रयोग मिट्टी में पोषक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए किया जाता है। जैविक खाद न केवल पोषक तत्वों को उपलब्ध कराते हैं अपितु ये मृदा की भौतिक संरचना, रासायनिक एवं जैविक गुणों में वृद्धि करते हैं। एक टन गोबर की खाद तथा कम्पोस्ट के प्रयोग से 5–8 किग्रा. नत्रजन, 3.0–3.5 किग्रा. फास्फोरस एवं 5–6 किग्रा. पोटाश मिलता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न गौण तथा सूक्ष्म तत्व भी संतुलित मात्रा में पौधों का उपलब्ध होते हैं। इसी तरह विभिन्न फसलों जैसे– करंज, नीम, अरंडी, मूंगफली, सरसों, तिल, सरगुजा इत्यादि के खली का एक टन प्रति हेक्टेयर प्रयोग करने से 30–70 किग्रा. नत्रजन, 8–20 किग्रा. फास्फोरस एवं 10–20 किग्रा. पोटाश मिलता है। केंचुआ खाद अर्थात् वर्मी कम्पोस्ट एक उच्चकोटी की संतुलित कार्बनिक खाद है जो सब्जियों के लिए काफी उपयुक्त है। इसमें नत्रजन 1. 5–1.8 प्रतिशत, फास्फोरस 0.6–0.8 प्रतिशत तथा पोटाश 0.8–1.7 प्रतिशत के अतिरिक्त सूक्ष्म पोषक तत्व तथा कई तरह के एन्जाइम उपलब्ध होते हैं जो पौधों के लिए आवश्यक होते हैं। कार्बनिक खाद मिट्टी की उर्वरा शक्ति तथा मिट्टी के जल धारण क्षमता को बढ़ाते हैं। केचुआ खाद बुआई–रोपाई से पहले 0.2–0.3 टन/हेक्टेयर की दर से जमीन में मिलाना चाहिए।

मृदा में पोषक तत्वों खासकर नत्रजन की उपलब्धता बढ़ाने तथा उर्वरा शक्ति को बनाए रखने में दलहनी फसलों का विशेष महत्व है। दलहनी सब्जियों जैसे– मटर, लोबिया, सेम आदि के साथ–साथ अन्य दलहनी फसलों को सब्जियों के साथ फसल चक्र में सम्मिलित किया जा सकता है। दलहनी फसलों को सम्मिलित करने से सब्जियों की पैदावार में उत्साहजनक वृद्धि तथा उपज में स्थिरता देखी गई है एवं खेत में उगाने से दलहनी फसलों के जड़ों में निवास करने वाले जीवाणु द्वारा किये जाने वाले वायुमंडलीय नत्रजन के यौगिकीकरण का लाभ मिलता है। लोबिया, मटर, सोयाबीन, मूंगफली, मूंग, उर्द इत्यादि दलहनी फसलों से 40–90 किग्रा./हे. की दर से यौगिकीकृत नत्रजन का लाभ बाद में लगने वाली फसलों को मिलता है।

प्रमाणीकृत जैविक खेती में कृषि प्रबंधन के लिए हरी खाद का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। हरी खाद के प्रयोग से जैविक पदार्थ के अतिरिक्त मृदा में नत्रजन की मात्रा बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त जैव रासायनिक क्रिया में तीव्रता आती है तथा पोषक तत्वों का संरक्षण व उपलब्धता बढ़ती है। बरसात में उगाए जाने वाले हरी खाद जैसे ढैंचा एवं सनई तथा शुष्क मौसम में उगायी जाने वाली हरी खादों में सेन्जी एवं बरसीम प्रमुख हैं। हरी खाद की जुताई उस समय करनी चाहिए जब फसल में काफी पत्तियाँ आ जाए ध्यान रहे कि उनकी टहनियाँ कड़ी न हों जिससे पलटाई के बाद आसानी से सड़ जायें। साधारणतः बुआई से 40–50 दिन बाद हरी खाद फसल पलटने के लिए तैयार हो जाती है जिसे मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त वन खेती फसल पद्धति में गिरी पुष्प एवं सुबबूल को खेत के चौहद्दी पर मेड़ बनाकर लगाये जा सकते हैं। इनसे मिलने वाले पत्तों को हरी

खाद के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। ग्लिरिसिडिया पौध की एक टन हरी पत्तियों से लगभग 30–40 किग्रा. नत्रजन, 3.0–3.2 किग्रा. फास्फोरस एवं 15–25 किग्रा. पोटाश मिलता है।

फसल अवशेष

विभिन्न फसलों के अवशेष के अपने स्थान पर खेतों में जुताई कर मिट्टी में मिला दिया जाता है। धान, मूंगफली, मूंग, गेहूँ, ज्वार तथा मक्का के तनों आदि के प्रयोग से मिट्टी में जैविक कार्बन में वृद्धि के साथ–साथ मृदा की भौतिक संरचना भी उत्कृष्ट हो जाती हैं। फसल अवशेष के एक टन से 3–15 किग्रा. नजत्रन, 2–7 किग्रा. फास्फोरस तथा 3–20 किग्रा. पोटाश प्राप्त होता है। इसके साथ ही फसल अवशेष को पलवार के रूप में अथवा कम्पोस्टिंग हेतु उपयोग किया जा सकता है।

जैव उर्वरक अथवा जीवाणु खाद

कुछ जीवाणु पौधों की जड़ों में या उसके आस–पास रहकर वायुमंडलीय नत्रजन का यौगिकीकरण करते हैं या भूमि में उपलब्ध अघुलनशील फास्फोरस, पोटाश आदि को घुलनशील कर पौधों के लिए उपयोगी बनाते हैं। इस प्रकार पौधों की वृद्धि एवं उपज बढ़ाने में ये सक्रिय योगदान देने के साथ–साथ मिट्टी की उर्वराशक्ति को बनाए रखने में सहायक होते हैं। इन जीवाणु खाद या जैव उर्वरकों को सब्जी फसलों में उपयोग किया जा सकता है। नत्रजन उपलब्ध कराने वाले जीवाणु खादों में *राइजोबियम, एजेटोबैक्टर, एजोस्पीरिलम* इत्यादि प्रमुख हैं। दलहनी सब्जियों जैसे–लोबिया, मटर, बीन आदि में नत्रजन की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए *राइजोबियम* जीवाणु खाद का प्रयोग करना चाहिए। अन्य सब्जी फसलों में नत्रजन की उपलब्धता बढ़ाने वाली जीवाणु खाद *एजोटोबैक्टर* तथा *एजोस्पीरिलम* हैं। मिट्टी में विद्यमान अघुलनशील फास्फोरस को घुलनशील बनाने वाले जीवाणु खाद पी.एस.बी. का उपयोग सभी फसलों में करना लाभदायक होता है। इसी प्रकार पोटैशियम तथा जिंक तत्वों की उपलब्धता को बढ़ाने हेतु जीवाणु खाद का प्रयोग किया जा सकता है। जीवाणु खाद का प्रयोग विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है जैस–बीज को उपचारित करने, पौधों के जड़ों को उपचारित करने अथवा जीवाणु खाद को मिट्टी में मिलाकर किया जा सकता है। बीज उपचार विधि में 250 ग्राम गुड़ को एक लीटर पानी में उबाल कर ठण्डा करने के बाद उसमें 500 ग्राम जीवाणु खाद को बीज में मिलाते हैं एवं छाया में सुखाकर बुआई के लिए प्रयोग किया जाता है। मिट्टी उपचार के लिए 5–10 किग्रा. कल्चर को 40–50 किग्रा. अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद में मिलाकर भीगे हुए जूट के बोरे से ढककर छायादार स्थान पर रख दिया जाता है। जूट के बोरे सूखने पर पुनः भीगोकर ढका जाता है। सामान्यतः 3–4 दिनों के अन्तराल पर 2–3 बार पलट दिया जाता है। उपरोक्त मिश्रण को 15–20 दिनों बाद एक हेक्टेयर खेत में समान रूप से बिखेर देना चाहिए। बिखरते समय ध्यान रखें की खेत में पर्याप्त नमी हो। जड़ उपचारित विधि में प्रमुख सब्जियों जैसे–टमाटर, मिर्च, बैंगन, फूलगोभी, पत्तागोभी इत्यादि के पौधों को पौधशाला से निकालकर मुख्य खेत में रोपाई करने से पहले उपचारित किया जाता है। इसके लिए 5–7 लीटर पानी में 2–3 किग्रा. कल्चर को मिलाकर घोल तैयार किया जाता है जिसमें पौधों की जड़ों को आधा घण्टा तक डूबोकर रखा जाता है। इसके पश्चात् पौधों का रोपण किया जाता है। इसी प्रकार अन्य जैव उर्वरकों जैसे– *बैसिलस* व *स्यूडोमोनास* जो पौधों की बढ़वार के साथ कई बीमारियों के प्रति रोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होते है, का भी प्रयोग किया जा सकता है।

जैव उर्वरक के साथ तरल खाद का प्रयोग सब्जी के फसल में कर सकते हैं जिसे संजीवक कहते हैं तथा इसे बनाने हेतु 100 किग्रा. गोबर में 100 लीटर गोमूत्र + 500 ग्राम गुड़ को 300 लीटर पानी में मिलाकर 10 दिनों तक सड़ने दिया जाता है। इसके बाद 20 गुणा पानी मिलाकर एक एकड़ क्षेत्र की मृदा पर छिड़काव किया जा सकता है अथवा सिंचाई जल के साथ प्रयोग किया जा सकता है।

जीवा मित्र बनाने हेतु 10 किग्रा. गाय की गोबर के साथ 10 लीटर गोमूत्र तथा 2 किग्रा. गुड़ और 2 किग्रा. बेसन को 200 लीटर पानी में मिलाकर एक किग्रा. मिट्टी जो किसी पीपल के पेड़ के पास से एकत्रित की गयी हो, को इस मिश्रण में मिला दिया जाता है। इस मिश्रण को 7–10 दिनों तक सड़ने देते हैं और नियमित रूप से दिन में दो बार मिश्रण को किसी लकड़ी की सहायता से मिलाते रहते है। 10 दिन उपरान्त इस मिश्रण को एकड़ खेत में छिड़काव किया जा सकता है अथवा सिंचाई जल के साथ प्रयोग किया जा सकता है।

फसल का चुनाव

जैविक खेती के लिए चयनित फसल तथा उनकी किस्में, स्थानीय पर्यावरणीय दशाओं के अनुकूल और कीट व बीमारियों के प्रति अवरोधी होनी चाहिए। चयनित किस्मों के बीज प्रमाणित होने चाहिए। यदि प्रमाणित जैविक बीज उपलब्ध न हो तो बिना रसायनिक उपचार के अन्य बीज का भी प्रयोग किया जा सकता है। जैविक खेती में परिवर्तित अनुवांशिक बीज तथा ट्रान्सजेनिक पौधों का प्रयोग वर्जित है।

खरपतवार प्रबन्धन

सब्जियों के जैविक खेती में खरपतवार का समुचित प्रबंधन आवश्यक होता है। इसमें रसायनिक खरपतवार नाशी का प्रयोग नहीं किया जा सकता। यांत्रिक विधि एवं सस्य क्रियाओं के उचित प्रयोग से खरपतवार नियंत्रण किया जाता है। ग्रीष्मकाल में खेत की गहरी जुताई, मिट्टी का सौर्यीकरण, निराई–गुड़ाई, उचित फसल चक्र,जैविक पलवार का प्रयोग, उचित उर्वरक एवं सिंचाई प्रबंधन आदि विधियों का परिस्थिति के अनुसार प्रयोग करके सब्जियों में खरपतवार से होने वाली हानि से बचाया जा सकता है।

कीटएवं रोग नियंत्रण

जैविक उत्पादन में रासायनिक कीटनाशकों, फफूँद नाशकों इत्यादि का प्रयोग वर्जित है, इसलिए इनके रोकथाम हेतु जैविक तथा अन्य विधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

1. यांत्रिक विकल्प

इस विधि के अन्तर्गत खेतों को गर्मी के दिनों में गहरी जुताई, मिट्टी का सौर्यीकरण, रोग ग्रस्त पौधों को निकालना, कीटों के अण्डे तथा लार्वा को एकत्र कर नष्ट करना, खेतों में चिड़ियों के बैठने के लिए स्थान की व्यवस्था करना, प्रकाश ट्रैप, फेरोमोन ट्रैप अथवा रंगीन चिपचिपी पट्टी इत्यादि लगाकर कीट का नियंत्रण करना सम्मिलित है।

2. सस्य (कल्चरल) विधि

इसके अन्तर्गत प्रतिरोधी प्रजातियों एवं रोग मुक्त बीजों का प्रयोग सबसे अच्छा बचाव का उपाय है। प्रभावी फसल चक्र, ट्रैप फसल तथा अन्तवर्ती फसल आदि के प्रयोग एवं परभक्षी कीटों के प्राकृतिक अधिवास में बदलाव से नाशीजीवों को नियंत्रित किया जा सकता है।

3. जैविक विकल्प

इस विधि में नाशीजीवों का भक्षण करने वाले जीव–जन्तुओं जैसे– *ट्राइकोग्रामा चेलोनस* अथवा *क्राइसोपरला* का प्रयोग करके नाशीजीवों पर नियंत्रण किया जा सकता हैं। इसी प्रकार *बैवेरिया बेसियाना, मेटाराइजियम एनिसोपिलयाई* आदि विशेष नाशीजीव समुदाय का प्रबंधन कर सकते हैं। बी.टी. (*बैसिलस थुरीजिएन्सि*) नामक बैक्टीरिया का प्रयोग फूलगोभी एवं पत्तागोभी में लगने वाले हीरक पृष्ठ पतंगा के नियंत्रण में काफी प्रभावी पाया गया है। इसके अतिरिक्त बहुत से वानस्पतिक वृक्षों एवं पौधों की पत्तियों अथवा बीज के अर्क का उपयोग नाशीजीवों के नियंत्रण में किया जा सकता है। नीम के अर्क एवं तेल विभिन्न प्रकार के कीटों के नियंत्रण में काफी प्रभावी है। नीम के बीज का घोल बनाने के लिए 35 किग्रा. नीम के बीज को पानी में पीसकर 100 लीटर घोल तैयार कर टब में जमा करें। 12 घंटे बाद कपड़े से छानकर प्रति लीटर घोल को 6 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

ट्राइकोडर्मा विरडी या *ट्राइाकोडर्मा हार्जिएनम* या *स्यूडोमोनास फ्लुरिसेस* का 4 ग्राम/किग्रा. बीज के दर से अकेले अथवा संयुक्त रूप से प्रयोग अधिकांश बीज जनित या मृदा जनित रोगों के नियंत्रण में

प्रभावी पाया गया है। *ट्राइकोडर्मा* को गोबर के खाद के साथ मिलाकर पूरे खेत में छिड़काव करने से भी कई बीमारियों के नियंत्रण में लाभप्रद पाया गया है।

4. जैविक प्रमाणीकरण

जैविक प्रमाणीकरण में कृषि उत्पादन पद्धति का प्रमाणीकरण किया जाता है न कि कृषि उत्पाद का। इसके निर्धारण के लिए अलग–अलग देशों के अपने–अपने मानक हैं। हमारे देश में जैविक प्रमाणीकरण के लिए एपीडा को नोडल एजेन्सी बनाया गया है। जैविक खेती के प्रमाणीकरण करने हेतु भारत सरकार ने निम्न पाँच संस्थाओं को मान्यता प्रदान की गयी है

संस्थाओं के नाम	**बेवसाइट**
तमिलनाडु जैविक प्रमाणीकरण विभाग	www. tnocd. org
एपीडा	www.apeda.com
स्पाइसेस बोर्ड	www. indiaspices.com
काफी बोर्ड	www.indiacoffee.org
टी बोर्ड	www.teaboard.gov.in

उपरोक्त संस्थायें देश में जैविक खेती के प्रमाणीकरण करने के साथ–साथ जैविक प्रमाणीकरण करने हेतु संस्थाओं को मान्यता प्रदान करते हैं जो जैविक खेती का प्रमाणीकरण करने के उपरान्त प्रमाण पत्र प्रदान करते है। वर्तमान में एपीडा द्वारा राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम के अन्तर्गत 29 संस्थाओं को भारत में जैविक प्रमाणीकरण करने हेतु मान्यता प्रदान की गयी है।

''जिसे अब तक ना समझों वो कहानी हूँ मैं,
मुझे बर्बाद मत करों पानी हूँ मैं।।

ग्रीष्मकालीन पत्तागोभी उगायें: भरपूर लाभ कमायें

श्रीप्रकाश सिंह, यशपाल सिंह, शुभदीप रॉय, नीरज सिंह एवं डी.आर. भारद्वाज

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

भारत में पत्तागोभी की खेती को प्राचीन काल से ही शरद कालीन सब्जियों में स्थान प्राप्त है। इसे बन्दगोभी या करमकल्ला के नाम से भी जानते हैं। वैज्ञानिकों द्वारा वातावरणीय परिवर्तन के अनुरूप किस्मों का विकास एवं अनुकूलन किया जा रहा है। आज के दौर में अत्याधुनिक तकनीकों तथा गर्मी को अधिक सहन करने वाली किस्मों के चलते किसान पत्तागोभी का उत्पादन करने में सफल हो रहा है। गर्मी में उत्पादित होने वाली पत्तागोभी का मूल्य बाजार में अधिक होने के कारण किसानों को अच्छा मुनाफा प्राप्त हो रहा है। पत्तागोभी का उपयोग अधिकतर फास्ट फूड, सलाद, अचार, पकौड़े, कढ़ी, मिक्स वेज तथा अण्डा रोल इत्यादि में अधिक करते हैं। गर्मी में उत्पादित पत्तागोभी में उपस्थित पोषक तत्व जैसे– कार्बोहाइड्रेट, विटामिन 'ए', विटामिन 'सी' एवं खनिज तत्वों की मात्रा शरद कालीन पत्तागोभी के समान ही होती है जिससे इसके स्वाद में भी कोई अन्तर नहीं आता है। इसके अलावा पत्तागोभी के कुछ औषधीय गुण भी है। यह पेट को साफ करने में बहुत कारगर है। इसमें क्लोरीन और सल्फर नाम के दो आवश्यक खनिज लवण होते हैं। इसके सेवन से वजन कम होता है। यह सब्जी पाचन से जुड़ी हर प्रकार की समस्याओं से निजात दिलाने में सक्षम है।

ग्रीष्मकालीन पत्तागोभी की खेती का दृश्य

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी (उत्तर प्रदेश) में चल रहे विभिन्न परियोजनाओं जैसे–फार्मर फर्स्ट, एससीएसपी तथा टीएसपी के तहत पूर्वांचल के विभिन्न जनपदों जैसे–वाराणसी, मिर्जापुर, चन्दौली, सोनभद्र तथा गाजीपुर के उत्पादकों को गर्मी में उत्पादित पत्तागोभी से होने वाले लाभ को देखते हुए तकनीकी प्रशिक्षण के माध्यम से जागरुक किया जा रहा है। प्रशिक्षण प्राप्त किये हुये किसान वैज्ञानिक ढंग से गर्मी वाली पत्तागोभी की खेती करके लाभ प्राप्त कर रहे हैं।

संस्थान द्वारा दिए गये गर्मी वाली पत्तागोभी के तकनीकी प्रशिक्षण

1. गर्मी में पत्तागोभी की फसल लेने के लिये खेत की मिट्टी अच्छी प्रकार से तैयार करना चाहिए जिसके लिये तीन से चार बार जुताई करने की आवश्यकता होगी।
2. गर्मी वाली पत्तागोभी की खेती करने के लिये किस्मों का चुनाव सबसे जरुरी है क्योंकि गर्मी में अधिक तापक्रम सहन करने वाली किस्म होनी

चाहिए। सामान्यतः किस्मों से गर्मी वाली पत्तागोभी की खेती नही की जा सकती है क्योंकि गर्मी में तापक्रम अधिक होता है। इसके लिए कुछ कम्पनियाँ कार्य कर रही हैं और गर्मी वाली पत्तागोभी की उन्नत किस्मों के बीज किसानों के लिये उपलब्ध हैं। कुछ प्रचलित किस्में जैसे– इण्डो–अमेरिकन–296, ग्रिडयान, श्री गणेश गोल, हरीरानी गोल आदि उत्पादकों द्वारा अपनायी जा रही हैं।

3. गर्मी वाली पत्तागोभी की खेती करने के लिए एक हेक्टेयर खेत में 20–25 टन गोबर की सड़ी खाद, 150 किग्रा. नत्रजन, 60 किग्रा. फास्फोरस एवं 60 किग्रा. पोटाश की आवश्यकता पड़ती है। नत्रजन की आधी मात्रा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत तैयार करते समय देवें। नत्रजन की शेष मात्रा को दो बराबर भागों में बाँटकर पौध पर मिट्टी चढ़ाते समय देवें।
4. एक हेक्टेयर खेत में गर्मी वाली पत्तागोभी की खेती करने के लिए 600–650 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है।
5. गर्मी वाली पत्तागोभी की पौधशाला तैयार करने के लिए क्यारियों में बीज की बुआई 15 जनवरी–15 फरवरी की बीच करते है। बीज का शोधन *ट्राइकोडर्मा* के 10 ग्राम/किग्रा. की दर से करते हैं।
6. गर्मी वाली पत्तागोभी का पौध रोपण 7–8 सेमी. की ऊँचाई के तथा 3–4 पत्ती होने के बाद करते हैं। इसके रोपाई का उचित समय 15 फरवरी–10 मार्च तक का होता है।
7. गर्मी अधिक होने के कारण पत्तागोभी में सिंचाई की आवश्यकता अधिक पड़ती है। इसकी सिंचाई लगभग 18–20 बार करनी चाहिए। तापक्रम अधिक होने के चलते तीन–चार दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए।
8. गर्मी वाली पत्तागोभी में अधिक तापक्रम के चलते शीर्ष अच्छी प्रकार से बंध नही पाते हैं। सुगठित शीर्ष के लिए किसान 200 ग्राम यूरिया का घोल 15 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करते हैं जिससे पत्ते आपस में बंधने लगते हैं। अच्छा होगा कि पौध वृद्धि के समय एन:पी.के. के घोल का पर्णीय छिड़काव या अन्य पादप वृद्धि नियामक जिनमें पोषक तत्व हों, का 20 दिन के अन्तराल पर दो बार पर्णीय छिड़काव करें।
9. गर्मी वाली पत्तागोभी के प्रमुख कीट माहूँ, तिलचट्टा, सफेद मक्खी तथा सुंडी हैं जिसमें माहूँ, तिलचट्टा तथा सफेद मक्खी जैसे चूसक कीट ज्यादा हानिकारक हैं। नियंत्रण के लिये इमीडाक्लोरोप्रिड की 0.5 मिली. मात्रा प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करते हैं। सूंडी पत्तागोभी के शीर्ष को छेद कर देती है जिससे शीर्ष सड़ने लगता है। इसके नियंत्रण के लिए इण्डोक्साकार्ब नामक रसायन का प्रयोग 0.75 मिली./लीटर पानी या रिनोक्सोपायर 0.3 मिली./लीटर पानी के दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

उन्नत खेती के लिए सम्बन्धित प्रशिक्षण भा.कृ. अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी द्वारा सघन अभियान के रूप में चलाया जा रहा है। फार्मर फर्स्ट परियोजना के अन्तर्गत पत्तागोभी उत्पादित करने वाले गाँवों की सफलता की कहानी का विवरण नीचे दिया गया है:

भा.कृ.अनु.प.– भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी की देख रेख में चल रहे फार्मर फर्स्ट परियोजना के तहत चयनित गाँव राजापुर, वाराणसी की ग्रीष्मकालीन पत्तागोभी उत्पादन की पहल एक उदाहरण है। किसान गर्मी के मौसम में बिना संरक्षित संरचनात्मक ढाँचा का उपयोग किये ही खुले वातावरण में पत्तागोभी की खेती करके लाखों रूपये कमा रहे हैं। इसके पीछे किसानों की कड़ी मेहनत और संस्थान द्वारा दिये जा रहे लगातार प्रशिक्षणों का योगदान है। परिचर्चा में किसानों द्वारा वैज्ञानिकों को बताया गया कि गर्मी में उगायी जाने वाली पत्तागोभी का मूल्य ठंड में उगायी जाने वाली उपज की तुलना में अधिक मिलता है। इसे दृष्टिगत करते हुए संस्थान के वैज्ञानिकों ने किसानों की इस मुहिम में उनका

साथ तकनीकों तथा प्रशिक्षणों के माध्यम से देने लगे हैं। उचित ढंग से तैयार गर्मी की पत्तागोभी का बाजार में न्यूनतम मूल्य 10–12 रु./किग्रा. हैं जो शरद काल में उगायी जाने वाली पत्तागोभी की कीमत से कहीं अधिक है।

राजापुर गाँव के किसानों के अनुसार उनके गाँव में गर्मी वाली पत्तागोभी की खेती लगभग 30–35 एकड़ भू–क्षेत्रफल पर की जा रही है जिसके विक्रय का उचित समय 15 मई–30 जून तक का होता है। इस मौसम में रोजाना 50–60 कुन्तल पत्तागोभी बाजाार में विक्रय के लिए जा रही है जिससे राजापुर गाँव में रोजाना 1.0–1.5 लाख रु. बाजार से आता है। वैज्ञानिक ढंग से खेती कर रहे किसान बताते हैं कि उनका उत्पादन लगभग 64–68 टन प्रति हेक्टेयर होता है जिसके विपणन के लिए किसानों को दूर नहीं जाना पड़ता बल्कि नजदीक में स्थित अनेकों सब्जी मण्डी उपलब्ध है। स्थानीय मण्डी जैसे–राजातालाब, चन्दुआसट्टी तथा पहड़िया मण्डी में उचित दाम पर आसानी से विक्रय हो जाता है। इससे किसानों का यातायात का खर्च काफी हद तक बच जाता है।

विक्रय हेतु राजापुर गाँव में किसानों द्वारा उत्पादित ग्रीष्म कालीन पत्तागोभी

गाँव में उत्पादित होने वाली ग्रीष्मकालीन पत्तागोभी में नर्सरी से लेकर उत्पादन तथा विपणन आदि सभी प्रक्रियाओं में संस्थान के वैज्ञानिक हमेशा किसानों के साथ लगे रहते हैं जिससे पूरे उत्पादन प्रक्रिया में क्षति के स्तर में विशेष कमी आती है और किसानों को आधुनिक जानकारी के कारण दिन प्रतिदिन लाभ बढ़ता जा रहा है। इस गाँव के किसान, अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिकों के साथ प्रक्षेत्र भ्रमण, स्वयं आकर तथा फोन आदि के माध्यम से जुड़ें हुये हैं। गर्मी में पत्तागोभी के इस तरह के उत्पादन को देखते हुए राजापुर के अतिरिक्त अन्य गाँवों के किसान भी अनुसंधान संस्थान से गर्मी वाली पत्तागोभी पर प्रशिक्षण प्राप्त कर खेती कर रहे हैं जिससे उनकी आय में वृद्धि हो रही है।

इस तरह भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित तकनीकों का संदेश के किसानों के बीच पहुँच रहा है जिससे किसान खेती के पारम्परिक तरीके को छोड़कर अत्याधुनिक और व्यवसायिक तरीकों को अपना रहे हैं। इससे किसानों की पोषण सुरक्षा सुदृढ़ हो रही है और किसान देश के विकास में जुड़कर अपनी भागीदारी को सुनिश्चित कर रहे हैं।

कम वर्षा वाले क्षेत्रों में ड्रैगन फल उगायें

के.के. गौतम, डी.आर. भारद्वाज, दुर्गा प्रसाद महारणा, लोकेश यादव[1], आर.के. दुबे, ए.के. सिंह, पी.एम. सिंह और जगदीश सिंह

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

1 आनन्द कृषि विश्वविद्यालय, आनन्द, गुजरात

ड्रैगन फल (*हाय्लोसेरस अनडेट्स*) एक लतादार कैक्टस की प्रजाति है, जो एशिया, मैक्सिको और दक्षिण अमेरिका के कुछ हिस्सों में पाया जाता है। सजावटी पौधों के रूप में एवं स्वादिष्ट पके फलों के लिए ड्रैगन फल को लगाया जा सकता है। ड्रैगन फल का पुष्प इतना सुंदर होता है कि इसे ''नोबल वुमन'' या ''क्वीन ऑफ द नाईट'' जैसे उपनाम से भी जाना जाता है। उत्पादन देने वाली यह बारहमासी फसल है जो पौध रोपण के बाद 2–5 साल के अन्दर पूर्ण उत्पादन दे देती है। आम तौर पर ड्रैगन फल थाईलैंड, वियतनाम, इजराइल और श्रीलंका में ज्यादा लोकप्रिय है। भारतीय बाजार में 200–300 रुपये प्रति किग्रा. के दाम में मिलने की वजह से आज भारत में भी इसकी खेती का प्रचलन तेजी से बढ़ रहा है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों को इसकी खेती के लिए उपयुक्त पाया गया है। इसके फल स्वाद में मीठा और बेहद ताजगी भरे होते हैं जो सामान्य रूप से 150–600 ग्राम वजन का होता है। इस फल को ताजे उपयोग के साथ–साथ इससे अन्य उत्पाद जैसे–जैम, आइसक्रीम, जेली, रस और शराब भी बना सकते हैं। ड्रैगन फल में विटामिन्स का स्तर उच्च होता है, जो शरीर के प्रतिरक्षा प्रणाली को बढ़ावा देते हैं। फलों में कोलेस्ट्रॉल बढ़ाने वाले तत्व नहीं होते हैं। इसका उपयोग दिल और हृदय प्रणाली के लिए अच्छा है। इसमें प्रचुर मात्रा में कैरोटीन मौजूद होता है, जो एंटी–कार्सिनोजेनिक गुण वाला है। इन सभी स्वास्थ्य लाभों के अलावा, ड्रैगन फल खाने से पाचन तंत्र में सुधार होता है। सौन्दर्य प्रसाधन के तौर पर भी इसे फेस पैक के रूप में उपयोग कर सकते हैं। यह स्वास्थ्य के दृष्टि से इतना लाभकारी है की इसे पोषक तत्वों का पावर हॉउस भी कहा जाता है एवं माना जाता है कि यह बुढ़ापे के असर को कम करता है तथा मधुमेह, कोलेस्ट्रोल, दमा इत्यादि गम्भीर रोगों को भी नियंत्रित करने में भी मदद करता है। साथ ही साथ हृदय रोगियों के लिए यह एक उत्तम आहार है और इसे एंटीऑक्सीडेंट का उत्तम स्रोत भी माना जाता है। अच्छे बाजार मूल्य मिलने की वजह से राजस्थान, गुजरात, बिहार और झारखण्ड जैसे राज्यों में इसकी खेती का प्रचलन तेज गति से बढ़ रहा है। औषधीय गुणों और उत्तम स्वाद के कारण भारत में इसकी मांग ज्यादा बढ़ रही है। फिलहाल भारत में इस फल की आपूर्ति थाईलैंड, मलेशिया, वियतनाम, श्रीलंका जैसे देशों से हो रही है। इसलिए भारत में अनुकूल जगहों पर इसकी खेती काफी लाभदायक सिद्ध हो सकती है।

ड्रैगन फल

उपयोग के लिए तैयार ड्रैगन फल

डैगन फल के प्रकार

ड्रैगन फल तीन प्रकार के होते हैं:

हाय्लोसेरस मेगालैंथस– इस प्रजाति के ड्रैगन फल में सफेद गूदा होता है और बाहरी रंग पीला होता है। इस प्रजाति का बाहरी कवच अन्य प्रजातियों की तुलना में थोड़ा ज्यादा कांटेदार हैं, इसलिए इसे बगीचे में देखना दुर्लभ है।

हाय्लोसेरस कोस्टारिसेंसिस– इस प्रजाति में एक भिन्नता यह है कि इसका गूदा तो सफेद होता है, लेकिन फल का बाहरी रंग लाल होता है।

हाय्लोसेरस अनडेट्स– इस प्रजाति के फल का बाहरी छिलका और गूदा दोनों लाल रंग के होते हैं। गूदा का रंग रक्त जैसा दिखता है। यह प्रजाति ज्यादा लोकप्रिय है। इसका बाजार भाव भी ज्यादा मिलता है।

ड्रैगन फल उगाने की सस्य तकनीकी

जलवायु

अधिकांश कैक्टस पौधों के विपरीत, यह एक लतादार पौध है जिसे वृद्धि एवं विकास के लिए सामान्यतः सूखे एवं उष्णकटिबंधीय जलवायु की आवश्यकता होती है। ड्रैगन फल के पौध का ठंडी जलवायु में विकास नहीं होता है। इसलिए सुनिश्चित कर लें कि 5 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान से होने वाले नुकसान से बचाव हेतु युक्ति को अपनायें। उचित विकास के लिए वातावरणीय तापमान 25–35 डिग्री सेल्सियस के मध्य होना चाहिए। इसके लिए औसतन 50 सेमी. से भी कम वार्षिक की दर से वर्षा की जरुरत होती है। ज्यादा तीखी धूप इसकी खेती के लिए अच्छी नहीं मानी जाती है।

मृदा एवं खेत की तैयारी

ड्रैगन फल को रेतीली दोमट से लेकर दोमट मिट्टी में सुगमतापूर्वक उगाया जा सकता है। हांलाकि बेहतर जीवांश और जल निकासी वाली बलुई मिट्टी इसकी उपज के लिए सबसे उत्तम होती है। इसका पौध किसी भी मिट्टी में बढ़ने में सक्षम है, जो अच्छी तरह से सूखी है, लेकिन बढ़वार के लिए ऐसी मृदा उपयुक्त है जिसका पी.एच. मान थोड़ा अम्लीय (5.5–7.0 तक) हो। खेत की अच्छी तरह से 2–3 गहरी जुताई की जानी चाहिए ताकि मिट्टी में मौजूद सारे खरपतवार कटकर नष्ट हो जायें। जुताई के बाद खेत में जैविक खाद, कम्पोस्ट, गोबर की खाद या वर्मी कम्पोस्ट अवश्य मिट्टी में दिया जाना चाहिए।

खेत तैयार होने के साथ–साथ अब आपको एक आधारिक संरचना बनाने की जरुरत है। पौधो को तेजी से बढ़ाने में मदद करने के लिए लोहे या सीमेंट का खम्बा लगभग 3 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है और खम्बे के उपरी हिस्सों पर लोहे की छड़ की सहायता से लोहे की गोल छल्ला लगा देना चाहिए ताकि पौधों का फैलाव अच्छे तरीके से हो सकें। ड्रैगन फल का सामान्य जीवनकाल 20–25 वर्ष का है इसलिए टिकाऊ खम्बा और रिंग का निर्माण जरुरी है। यह संरचना थोड़ा महंगा साबित होता है। अतः एक एकड़ में खेती के लिए शुरुआत के 2–3 वर्षो में लगभग 15 लाख का खर्च आता है लेकिन चिंता की बात नहीं होनी चाहिए क्योंकि एक बार इसके निर्माण के बाद 15–20 वर्षो तक इसमें सिर्फ आमदनी ही आमदनी है बिना कोई विशेष खर्च किये ।

प्रवर्धन

- **बीज से ड्रैगन फल का प्रवर्धन**

बीज से भी ड्रैगन फल का प्रवर्धन किया जा सकता है। फल को मध्य भाग से काटकर पके बीजों को बाहर निकालना होता है। बीजों को गूदे से मसलकर अलग करते हैं तथा बीजों को धुलाई कर उपरान्त प्रो ट्रे में रेत एवं मिट्टी के मिश्रण को भरकर उसमें बुवाई कर करते हैं।

- **कलम से ड्रैगन फल का जनन**

कलम के माध्यम से पौध तैयार करना सबसे आसान एवं कम खर्चे वाला तरीका है। कलम से तैयार पौधे एक से दो साल बाद फलना शुरू करते हैं। कलम पूरे वर्ष तैयार की जा सकती है, इसके लिये फलन के बाद सुबह के समय कलमों को इकट्ठा

करना बेहतर होता है। इसके अलावा, सबसे अच्छे परिणामों के लिए ग्रीष्मकाल के दौरान कटाई शुरू करना सुनिश्चित करें। कर्त्तन द्वारा जनन में, पूरे तने के खंड या 15–60 सेमी. लम्बी कलम को नीचे से तिरछा चीरा लगाकर मुख्य पौधे से अलग किया जाता है। इसके लिए कर्त्तन द्वारा पौध प्रवर्धन जितनी लम्बी तना होगी उतने ही ज्यादा पौधे निकलने का अवसर रहता है। आम तौर पर 30 सेमी. लम्बे तना से नए पौधे बन सकते हैं। एक बार जब आप कलम को काट लेते हैं तो सिरों पर फफूंदनाशक लगाकर ठंडी स्थान पर 5–7 दिनों तक सूखने के लिए छोड़ देते हैं। सूखने के पश्चात् कर्त्तन को उसी दिशा में उन्मुख करके रखते हैं जिस दिशा में मूल पौधे से निकाली गयी थी। उचित देखभाल करने पर 15–18 दिनों उपरान्त आपको जड़ें दिखाई देने लगेंगी। यदि जनन सफल रहा, तो आप जल्द ही नई वृद्धि देखेंगे। इस विधि से पौध आमतौर पर 3–4 सप्ताह बाद तैयार हो जाते हैं। पौध को मिट्टी में लगभग 5–7 सेमी. की गहराई लगा देना चाहिए। प्रतिदिन पौधे को हल्का पानी देना सुनिश्चित करें, जब तक कि मिट्टी नम न हो; फिर एक दिन के लिए छोड़ दें।

कलम द्वारा तैयार पौधे

पौध रोपड़ की विधि

आधार संरचना बन जाने के बाद अब बारी आती है पौध लगाने की। व्यवसायिक खेती के लिए कलम द्वारा तैयार पौध ही उत्तम होती है। इसकी कलमों को लगाने के लिए एक कतार में 3–3 मीटर की दूरी छोड़कर 60 सेमी. चौड़ा और 60 सेमी. गहरा गड्ढों की खुदाई करनी चाहिए। फिर कलम वाले पौधे को सूखे गोबर और बालू (रेत) को 1:2 के अनुपात में मिलाकर गड्ढे में रोपण कर दें। मिट्टी के साथ प्रति गड्ढे में 100 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट और वर्मी कम्पोस्ट मिला कर भर दें। इस तरह एक हेक्टेयर ज़मीन में 1100 पौधे लग जाते हैं। ड्रैगन फल के पौधे गति से विकसित होते हैं। इसलिए पेड़ों को सहारा देने के लिये सीमेंट का खम्बा और तख्त लगाना चाहिए। अन्य फसलों की तुलना में ड्रैगन फल को कम पानी की आवश्यकता होती है लेकिन पौध रोपाई के तुरंत बाद पानी दें फिर एक सप्ताह उपरांत सिंचाई करें।

खाद एवं उर्वरक

पौधों के विकास में जमीन में उपलब्ध जीवाश्म मुख्य रूप से सहायक होते हैं। इसलिए प्रति पौध 10–15 किग्रा. जैविक उर्वरक या कम्पोस्ट देना चाहिए। जैविक खाद की मात्रा प्रति दो वर्ष में बढ़ाते रहना चाहिए। पौधे के समुचित विकास के लिए समय समय पर रसायनिक उर्वरक भी देना चाहिए जिसमें पोटाश + सुपर फास्फेट + यूरिया को 40:90:70 ग्राम प्रति पौध देना चाहिए। जब पौधों में फल लगाना शुरू हो जाये तब नाइट्रोजन की मात्रा कम करके पोटाश की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए जिससे अधिक उपज प्राप्त हो सके। फूल आने के पहले और फल आते समय प्रति पौध 50 ग्राम यूरिया, 50 ग्राम सिंगल सुपर फास्फेट और 100 ग्राम पोटाश देना चाहिए। प्रति वर्ष प्रति पौध में 220 ग्राम रासायनिक खाद बढ़ाई जानी चाहिए। ठंड के महीनों में पौधों का पोषण बंद करना चाहिए। ड्रैगन फल की खेती में उर्वरकों के विवेकपूर्ण अनुप्रयोग की आवश्यकता होती है। उर्वरक दरों की सिफारिशें व्यापक रूप से भिन्न हैं। कैल्शियम और सूक्ष्म पोषक तत्व प्रति वर्ष डालते रहना चाहिए क्योंकि इनके प्रयोग से फलों के विकास और गुणवत्ता दोनों में वृद्धि होती है।

सिंचाई

केक्ट्स होने के कारण ड्रैगन फल के पौधों को कम पानी की आवश्कता होती है। पौध कई महीनें तक बिना पानी के जीवित रह सकता है लेकिन

व्यवसायिक खेती के लिए समुचित सिंचाई का प्रबंध होना चाहिए। प्रति दिन प्रति पौध लगभग 1–2 लीटर पानी गर्मी के दिनों में या सूखे के समय देना चाहिए। ड्रैगन फल की सिंचाई के लिए ड्रिप सिंचाई सबसे बेहतर होती है लेकिन अगर आपके पास बजट की कमी हो तो शुरूआती वर्ष में ड्रिप सिंचाई न भी लगायें तो पारम्परिक तरीके से सिंचाई कर सकते हैं।

पौधों को सहारा देने की संरचना

पुष्प परागण

पतंगे, चमगादड़ और मधुमक्खियाँ रात में और सुबह ड्रैगन फल के विकसित फूलों को परागित करती हैं, लेकिन कुछ किस्में ऐसी हैं जो परागण नहीं करती हैं। इसलिए यहाँ कृत्रिम परागण की आवश्कता पड़ती है। इसके लिए अन्य ड्रैगन फलों के पौधों से परागकण इकट्ठा करने की आवश्यकता होगी और परागकण को ब्रुश के माध्यम से मादा जननांग पर लगाना चाहिये। रात में आठ बजे से सुबह आठ बजे के मध्य परागण सबसे अच्छा है। यदि आप विभिन्न किस्मों के पौधों को परागित कर रहे हैं, तो प्रत्येक के लिए एक नए ब्रुश का उपयोग करें। फल को बढ़ने में लगभग एक महीने का समय लगता है।

फूल एवं फल आने का समय

पौधे का ज्यादातर बढ़वार गर्म महीनों के दौरान होती है। यह वर्ष के बाकी हिस्सों में नहीं बढ़ेगा लेकिन जब यह बढ़ता है, तो यह तेजी से बढ़ता है। पौधों पर फूल मई–अक्टूबर तक पुष्पित होते हैं लेकिन वे केवल प्रत्येक वर्ष एक रात के लिए खिलेंगे। पुष्प परागण के बाद फल बनने शुरू हो जाते हैं। औसतन एक पौध 20–25 वर्ष तक फल पैदा कर सकता है। इसलिए यदि एक पौध लगाते हैं, तो बहुत सारे ड्रैगन फलों को प्राप्त कर सकते हैं।

		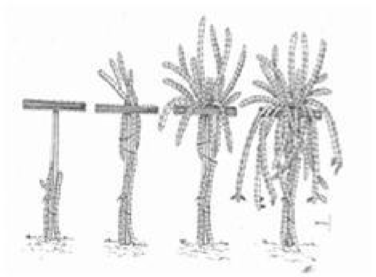
बेल चढ़ाना एवं छँटाई	**ड्रैगन फल के पुष्प एवं तैयार फल**	**पौध सधाई की चरणबद्ध तकनीकी**

पौधे बहुत तेजी से बढ़ते हैं और छोटी अवधि में ही गोल छल्ला (ट्रेलीस) तक पहुच जाते हैं। जैसे–जैसे बेलें बढ़ती हैं, उसके जमीन पर फैलने की आशंका बनी रहती है, जिससे गंभीर क्षति हो सकती है। लताओं को मुक्त रूप से ट्रेलीस के सहारे बांधने पर उन्हें गिरने से बचाया जा सकता है। इसमें मुख्यतः खर्चा बेल को चढ़ाने वाले खम्भे या एंगिल आयरन (पोल) की स्थापन में लगता है। इस लागत को कम करने के लिए कम खर्चीले लकड़ी या बाँस के खम्भें जैसे विकल्प भी मौजूद हैं। एक हेक्टेयर में लगभग 800–1100 पौधों को समायोजित किया जा सकता है।फसल को एक बार लगाए जाने के बाद लगभग 20 वर्षों तक पुष्पन एवं फलत करता है। पार्श्व शाखाओं की समय समय पर छँटनी करते

रहना चाहिए जिससे मुख्य लता ट्रेलिस की ओर बढती रहें। एक बार जब मुख्य लता ट्रेलिस तक पहुच जाये फिर उसकी कटाई एवं छटाई नहीं करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा

मिलि बग और माहूँ ड्रैगन फल के लिए एक आम समस्या है। ये कीट पौधों का रस चूसने वाले होते हैं जो मूल रूप से पौधे के मीठे रस का सेवन करते हैं। माहूँ चींटियों को भी आकर्षित करते हैं। सुण्डी और थ्रिप्स भी एक बाधा हो सकती है परन्तु वे पौधे को नहीं मारेंगे, लेकिन वे पौधे के समग्र स्वास्थ्य के लिए अच्छे नहीं हैं। ड्रैगन स्पॉट्स, जो एक पौधे के तने और पत्तियों पर होते हैं, यह संकेत हो सकता है कि आपके पौधे में संक्रमण हो रहा है। यह जीवाणु जनित बीमारी है जो शाखाओं के सिरों को प्रभावित करती हैं जिससे मुलायम तने में सड़ने की समस्या बन सकती है। यह बीमारी आम तौर पर पौधे से पौधे में स्थानांतरित होती है, इसलिए कटाई करने वाले औजारों की समय समय पर सफाई करते रहें। पौधों में ''सनबर्न'' वर्ष के सबसे गर्म समय के दौरान हो सकता है। जब तेज गर्मी हो रही हो और अगर पौधे को बहुत अधिक पानी दिया जाता है, तो जड़े सड़ भी सकती है।

तुडाई एवं उपज

ड्रैगन फल 6–9 महीने के भीतर विकसित होकर पक जाता है परन्तु अच्छी पैदावार दूसरे वर्ष से प्राप्त होती है। मई–जून के महीने में पुष्प लगते हैं तथा नवंबर तक फल आते रहते हैं। तीसरे वर्ष के उपरांत औसतन 10,000–12,000 किग्रा. प्रति हेक्टर उपज मिलने लगती है। पौधे पर एक मौसम में 3–5 बार फल लगता है एवं प्रत्येक फल का वजन 300–500 ग्राम होता है। एक पौधे पर 20–40 फल लगते हैं जिनका अनुमानित वजन 15–20 किग्रा. प्रति पौध होता है, एक हेक्टर में अनुमानित 1100 पौधे रोपण किये जाते हैं। इस प्रकार कुल औसत उपज 16,500 किग्रा. प्राप्त होती है जिससे प्रति हेक्टर अनुमानित आय 4–5 लाख रुपए होते है। फलों के आकार एवं गुणवत्ता को सुधारने और बनाए रखने के लिए अधिक संख्या में विकसित फूलों की छंटाई कि जा सकती है और गुणवत्तायुक्त फल प्राप्त किये जा सकते है जो निर्यात बाजारों के लिए उत्पादन करते समय महत्वपूर्ण है।

इंसान हमेशा वो बन जाता है जो वो होने में वो यकीन करता है। अगर मैं खुद से यह कहता रहूँ कि मैं इस चीज को नहीं कर सकता, तो यह संभव है कि मैं शायद सचमुच में वो करने में असमर्थ हो जाऊँ और इसके विपरीत अगर मैं यह यकीन करूँ कि मैं ये कर सकता हूँ, तो मैं निश्चित रूप से उसे करने की क्षमता पा ही लूँगा, फिर भले ही शुरू में मेरे पास वो क्षमता ना रही हो।

– महात्मा गाँधी

आर्थिक सम्पन्नता के लिए अचार बनायें

अनुराधा रंजन कुमारी, अशोक राय, कमलेश मीना, अभय कुमार सिंह एवं रजनीश श्रीवास्तव
कृषि विज्ञान केन्द्र, मल्हना, देवरिया
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305 उत्तर प्रदेश

मुख्य मौसम में सब्जियाँ प्रचुर मात्रा एवं सस्ते दर पर उपलब्ध होती हैं। अनुकूल मौसम में अधिक पैदावार होने के कारण उत्पाद का बड़ा हिस्सा लगभग 30–35 प्रतिशत बर्बाद हो जाता है। सब्जियों की अधिकता के बावजूद भी एक ओर इनका सही उपयोग न कर पाने की समस्या तथा दूसरी ओर हजारों देशवासियों में कुपोषण की समस्या नजर आती है। इस विकट परिस्थिति के बीच संतुलन बनाये रखने के लिए सब्जियों का अचार ही उत्तम साधन हैं। घरेलू स्तर पर अचार बना कर आय में वृद्धि की जा सकती है। अचार को उच्च गुणवतायुक्त बनाने हेतु साफ सफाई एवं ताजी सब्जियों का चुनाव करना चाहिए। सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा इस विषय पर सघन रोजगार मूलक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाकर पर्याप्त कौशल विकसित कर ग्रामीण युवाओं, युवतियों, महिलाओं को इससे रोजगार स्वावलम्बी एवं समाज की मुख्य धारा के साथ शामिल किया जा सकता हैं। अतः प्रत्येक का कर्तव्य है कि सब्जियों का अधिकतम उत्पादन के साथ–साथ उनके प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन की कला को सीखने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए, जिससे कृषि उत्पदों को नष्ट होने से बचाया जा सके। जनवरी–फरवरी में मुख्य सब्जियों जैसे– गाजर, नींबू, आलू, टमाटर, मटर, फूलगोभी, बंदगोभी इत्यादि बड़े पैमाने पर एवं सस्ते दामों में मिलते है। मई–जून में करेला की उपलब्धता होती है। जुलाई–अगस्त में बैंगन व टमाटर की उपलब्धता रहती है। सितम्बर–अक्टूबर में लोबिया, भिण्डी, टमाटर उपलब्ध होते हैं। नवम्बर–दिसम्बर महीनें में पेठा प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होता है। शहरीकरण के कारण लोगों में संरक्षित पदार्थ खाने की आदत बनती जा रही है। इसलिए खासकर ग्रामीण महिलाओं के लिए सब्जियों का प्रसंस्करण आवश्यक है। अचार बनाने की आवश्यक सामग्री एवं विधियों का वर्णन दिया गया है।सब्जियों के प्रसंस्कृत उत्पाद एवं अचार बनाने में उद्यमिता के विकास की भी असीम संभावनाएँ हैं, इसलिए इसे अपनाकर ग्रामीण महिलाऍ अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थिति में बदलाव ला सकती हैं।

1. कटहल का अचार

- **कटहल के फल का अचार**

सामग्री : कटहल के टुकड़े 1 किग्रा., सरसों तेल 350 मिली., कटे हुए आम के टुकडे 1/2किग्रा., जीरा 15 ग्राम, मेथी 5 ग्राम, सौंफ 20 ग्राम, राई दाल 100 ग्राम, हल्दी पिसी 500 ग्राम, मिर्च पाउडर 30 ग्राम, हींग पिसी 1 छोटा चम्मच, नमक 250 ग्राम या स्वादानुसार, सिरका 50 मिली.।

विधि–सर्वप्रथम कटहल के टुकड़े को हल्का उबालकर पानी निथारे एवं साफ सूती कपड़े में फैलाकर 2–3 घंटे तक सुखायें अब जीरा, मेथी, सौंफ को हल्का भून कर पीस ले। कड़ाही में तेल गर्म कर राई दाल, भुना पिसा जीरा, मेथी व सौंफ, हल्दी, मिर्च पाउडर, हींग डाले एवं कटहल के टुकड़े डालकर अच्छी प्रकार मिश्रित कर लें। अब आम के टुकड़ों को डाल कर नमक मिलायें एवं अच्छी तरह मिलाकर आँच से उतारें। ठंडा होने पर सिरका मिलायें। काँच के चौड़े मुँह के जार में संरक्षित करें।

- **कटहल के बीज का अचार**

सामग्री: कटहल के बीज 1 किग्रा., कच्चा आम 1/2 किग्रा., सरसो तेल 300 मिली., नमक 225 ग्राम, सौंफ (मोटा कूटा) 30 ग्राम, मेथी (भुना व कुटा) 5 ग्राम, राई दाल 150 ग्राम, लाल मिर्च पाउडर 30 ग्राम,

हल्दी पाउडर 30 ग्राम, हींग 1/2 चम्मच, सिरका 50 मिली.।

विधि :– कटहल के बीज को पानी में हल्का उबालकर छिलका निकालें। अब साफ सूखे कपड़े में पानी से निकालकर 2–3 घंटे तक फैला दें। आम का छिलका उतार कर साफ करें एवं कद्दूकस कर लें। अब कड़ाही में तेल गर्म कर राई व सभी मसालें, हींग डालकर अच्छी तरह मिलायें। अब कटहल का बीज एवं कद्दूकस किया आम भी मिला कर अच्छी तरह चलायें एवं मिलायें। नमक मिलाकर भली–भॉति चलायें एवं आँच से उतार लें। ठंडा होने पर सिरका डालें। अचार को मर्तवान या कॉच की बोतल में भरकर रखें।

2. टमाटर के अचार

सामग्री : लाल पके टमाटर 1 किग्रा., हरी मिर्च 12 पीस, लहसुन 10 कली, अदरक 2 ईंच आकार के 10–15 टुकड़ें, जीरा 3 चम्मच, सिरका 1/5 कप, तेल 500 मिली., हल्दी 2 चम्मच, लाल मिर्च (पिसा) 5 छोटा चम्मच।

विधि– अदरक, लहसुन और हरी मिर्च को काट लें एवं इसके आधे भाग को पीस लें। सिरके में हल्दी, लाल मिर्च; आधा बचा भाग एवं जीरा डालें और 5 मिनट तक पीस लें। टमाटर धोकर व टुकड़े बनाकर रख लें। भगौना में तेल व पिसा मसालें डालकर भूनें। शेष बचा मसाला भी डालें। भूनें मसाले, टमाटर और सिरका डालकर मिलायें और पकायें। बीच–बीच में चलायें। जब तेल उपर तैरने लगे तो समझे अचार तैयार है। ठंडा करके पात्र में भरकर रखें।

3. गाजर का अचार

सामग्री : गाजर 1 किग्रा., नमक 150 ग्राम, लाल मिर्च 20 ग्राम, हल्दी 20 ग्राम, सौंफ 50 ग्राम, मेथी दाना 50 ग्राम, सरसों का तेल 300 मिली.।

विधि :– ताजा गाजर लेकर उसे साफ पानी से धुलाई करें। गाजर को छिलकर लम्बाई में टुकड़े–टुकड़े करें। गाजर के टुकड़ों में सभी मसालें अच्छी तरह मिलाकर तेल डालकर पुनः मिला दें। कॉच की डिब्बों में भरकर रख दें। सामान्यतः 10–15 दिन में अचार तैयार हो जायेगा।

4. आँवला का अचार

सामग्रीः आँवला 1 किग्रा., नमक 150 ग्राम, लाल मिर्च 20 ग्राम, हल्दी 20 ग्राम, सौंफ 50 ग्राम, मेथी दाना 50 ग्राम, सरसों का तेल 100 मिली.।

विधि :– पके तथा दाग रहित आँवलें को लेकर इन्हें अच्छी तरह धुलाई करें। इन्हें उबलते पानी में 10–15 मिनट तक रखकर मुलायम कर लें। फाँकों को काटकर अलग कर इनमें से गुठली निकाल लें। अगर आँवलें का गूदा निकालने वाली मशीन हो तो उसके द्वारा गूदा एवं गुठली को अलग कर लें। इसके लिए ऑवलें को उबालना नहीं पड़ेगा। सुखे कपड़े पर 1–2 घंटे तक के लिए फैला दें। इसमें सभी मसालें, पीसी मेथी दाना तथा सौंफ अच्छी तरह से मिला दें। सरसों का तेल गर्म करें। गुनगुना होने पर ऑवलें के मिश्रण में अच्छी तरह मिला दें। 10–15 दिन में अचार खाने के लिए तैयार हो जायेगा।

5. करौंदा का अचार

सामग्री :कच्चे करौंदे 750 ग्राम, नमक 150 ग्राम, लाल मिर्च 20 ग्राम, सरसों का तेल 100 ग्राम, हल्दी 20 ग्राम, सौंफ 50 ग्राम, मेथी दाना 50 ग्राम, सिरका 20 मिली., हरी मिर्च 200 ग्राम, अदरक 50 ग्राम, सोडियम बेन्जोएट 5 ग्राम।

विधि :– ताजा करौंदा को साफ पानी से धुलाई करें, इसके बाद चार फॉकों में काटकर इनके बीज निकाल लें। हरी मिर्च को धोकर, लम्बाई में काटकर इसके बीज निकाल लें। अदरक को कद्दूकस कर लें। इसमें सौंफ, मेथी दाना तथा अन्य सभी मसालें मिला लें। इसके पश्चात् इसमें सिरका तथा सोडियम बेन्जोंएट डालें तथा उपर से तेल डालकर अच्छी तरह से मिला लें। इस मिश्रण को काँच की डिब्बा में डालकर रख दें। एक सप्ताह में अचार तैयार हो जायेगा।

6. कच्ची हल्दी का अचार

सामग्री : कच्ची हल्दी 1 किग्रा., नमक 150 ग्राम, लाल मिर्च 30 ग्राम, सौंफ 50 ग्राम, मेथी दाना 50 ग्राम, सरसों का तेल 250 मिली.।

विधि:– कच्ची हल्दी को साफ पानी से अच्छी तरह से धुलाई करें। हल्दी के लम्बाई में छोट–छोटे पतले टुकड़े कर लें। इसमें सभी मसालें अच्छी तरह से मिला लें। सरसों का तेल मिलाकर काँच की बर्तन में भर कर रख दें। सामान्यत: 15 दिन में अचार खाने लायक तैयार हो जायेगा।

7. नींबू का तेल रहित अचार

सामग्री : कागजी नींबू 1 किग्रा., नमक 250 ग्राम, लाल मिर्च–100 ग्राम।

विधि :– दाग रहित तथा पूरे पके हुए रसदार नींबू को साफ पानी से धुलाई करें। इन्हें साफ चाकू से आठ फॉकों में काट लें तथा बीज अलग कर लें। नमक तथा लाल मिर्च को कटे हुए नींबू पर डालकर अच्छी तरह मिला लें। मिश्रण को कॉच के बर्तन में भरकर, ढक्कन अच्छी तरह से लगाकर 15–20 दिन तक रोजाना धूप में रखे एवं अच्छी तरह से 1–2 दिनों के अन्तराल पर हिलाते रहें। लगभग 15–20 दिनों के अन्दर नींबू का तेल रहित स्वादिष्ट अचार तैयार हो जायेगा।

8. सब्जियों का मिश्रित अचार

सामग्री: फूलगोभी, गाजर, शलजम, चुकन्दर, मटर, मूली के टुकड़े बराबर मात्रा में 1 किग्रा., नमक–100 ग्राम, प्याज–50 ग्राम, बारिक कटा हुआ अदरक–100 ग्राम, लहसुन–10 ग्राम, लाल मिर्च, काली मिर्च, हल्दी, अजवाइन, जीरा, मेथी–प्रत्येक का 10 ग्राम, हरी मिर्च–20–25, सिरका–200 मिली., बारिक पिसा सरसों–50 ग्राम, सरसों का तेल–450 मिली.।

विधि :–सभी सब्जियों के टुकड़े तथा मटर के दानों को 5 मिनट तक खौलते पानी में उबाल लें। पानी से निकालकर इन्हें छायादार स्थान पर 1–2 घंटे तक सुखा लें। थोड़े से तेल में प्याज, लहसुन, अदरक तथा मसालों को भून लें। मटर, सब्जियों के टुकड़े तथा हरी मिर्च को मसालों के साथ अच्छी तरह मिला दें। तैयार पदार्थ को जार में भरने से पहले सिरके को अच्छी तरह मिला दें। काँच की जार में भरने के पश्चात् उपर से शेष बचा हुआ गर्म करके ठण्डा किया हुआ शुद्ध सरसों का तेल डाल कर जार बंद कर दें। जार को 4–6 दिनों तक धूप में रखें।

9. फूलगोभी का अचार

सामग्री: फूलगोभी के टुकडें 1 किग्रा., सरसों का तेल 150 मिली., नमक 60 ग्राम, लाल मिर्च 25 ग्राम,जीरा 2–5 ग्राम, लौंग 0.75 ग्राम, हल्दी 5 ग्राम, अदरक 25 ग्राम, दालचीनी 2–5 ग्राम, राई 50 ग्राम, इलायची (बडी) 7, सिरका 50 मिली.।

विधि :– दाग रहित, स्वच्छ फूलगोभी के शीर्ष काटकर टुकड़े कर लीजिए। टुकड़ों को धोकर साफ बर्तन में रखें। तेल में राई को छोड़कर सभी मसालों को भूनिये। मसालो को भूनते समय उसका रंग भूरा हो जाने पर उसमें टुकड़े कढ़ाई में डालकर चलायें। चलाते समय ध्यान रहें कि मसालें गोभी के टुकड़े में अच्छी तरह से मिल जाये। गोभी और मसालें का मिश्रण ठंडा होने पर उसमें राई तथा सिरका मिला दीजिये। टुकड़ों को जार में भरकर लगभग सात दिनों के लिए धूप में रख दीजिए।

10. करेला का अचार

सामग्री : करेला 1 किग्रा., नमक 150 ग्राम, राई 25 ग्राम, लाल मिर्च 10 ग्राम, हल्दी 30 ग्राम, सरसों का तेल 400 ग्राम।

विधि:– ताजे नरम व स्वस्थ करेले को धुलाई करके इन्हें बीच में से चाकू से चीरकर बीज व गूदा निकाल लीजिए। अब इनपर थोड़ा सा नमक मसल कर एक दो घंटे तक धूप में रखें। इसके बाद अचार से पानी छुटेगा तथा करेला का कड़वापन कम हो जायेगा। नमक के पानी को फेंक दे, फाँकों को लगभग दो घंटे तक धूप में सुखाना चाहिए। इसके बाद सब मसालों को बारीक पीसकर करेला के गूदा को साथ थोड़े से तेल में भून लीजिए तथा इन्हें करेला के

अन्दर भर दें अब कड़ाही में तेल गर्म करें, भरे हुए करेला को तेल में 5–7 मिनट तक धीमी आँच पर भूने। ठंडा होने पर इसे शीशे की बोतल में भरकर रखे व उपर से बचा हुआ तेल डाल दें।

11. लहसुन का अचार

सामग्रीः लहसुन 1 किग्रा., नमक 150 ग्राम, जीरा 5 ग्राम, लाल मिर्च 10 ग्राम, हरी मिर्च 50 ग्राम, काली मिर्च 5 ग्राम, बड़ी इलायची 10 ग्राम, हल्दी 10 ग्राम, लौंग 2 ग्राम, राई 25 ग्राम, अदरक 25 ग्राम, एसीटिक अम्ल 10 मिली., सरसों का तेल 250 मिली।

विधि :– मोटी फाँकों वाला लहसुन लेकर छील लें। इन्हें 2–3 टुकड़ों में काट लें, सब मसालों को बारीक कुट लें, अदरक तथा हरी मिर्च को छोटे टुकड़ों में काट लें। अब एक भगौना में थोड़ा सा तेल लेकर गरम करें एवं लहसुन के टुकड़ों को तेल में एक मिनट तक भूनें। भगौना को आग से उतारकर इसे ठंडा होने दें। इसमें कटी हुई अदरक, हरी मिर्च तथा पिसे हुए मसाले डालकर अच्छी तरह से मिलायें, इसमें एसीटिक अम्ल तथा थोड़ा सा तेल डालकर मिश्रण को अच्छी तरह से मिलायें। अचार को मर्तवान में भर दें तथा उपर से बचा हुआ तेल डालें। लगभग एक महीने में अचार खाने लायक तैयार हो जाएगा।

12. प्याज का अचार

सामग्री : प्याज 1 किग्रा., नमक 200 ग्राम, सिरका 1 लीटर।

विधिः– छोटे प्याज लेकर छील लीजिए। इनमें नमक मिलाकर एक–दो दिन तक काँच के जार या मर्तवान में रखें। इनका पानी निथारकर मर्तवान में सिरका भर दीजिए। इसे मिर्च व अन्य मसाले भी इच्छानुसार मिला दें।

13. पत्तागोभी का अचार

सामग्रीः पत्तागोभी 1 किग्रा., लाल मिर्च 25 ग्राम, नमक 50 ग्राम, लौंग 1 ग्राम, सिरका 750 मिली.।

विधि :– पत्तागोभी को धोकर बाहर की पत्तियाँ निकाल लें, इसे चार टुकड़ों में काटकर बीच का डन्टल निकाल दीजिए तथा टुकड़ों को बारीक लच्छों में काटें। लच्छों को दो घंटे तक धूप में सुखायें एवं इन्हें मर्तवान में भरें। मसालों को सिरके में धीमी आँच पर लगभग एक घंटे तक पकायें। ठंडा होने पर बोतल में भरें। तीन–चार दिन बाद अचार खाने योग्य हो जायेगा।

सब्जियों का अचार बनाते समय सावधानियाँ

1. सब्जी स्वस्थ एवं अच्छी किस्म की हो। सड़े–गले या चोट खाये सब्जी का प्रयोग न करें।
2. तेल को गर्म करके ठंडा करने के बाद ही अचार मिलाना चाहिए।
3. सफाई का पुरा ध्यान रखें तथा लोहे का चाकू व बर्तन का इस्तेमाल न करें।
4. संरक्षित पदार्थों को हाथ व गीले चम्मच से न निकालें।
5. बर्तन या जार को बार–बार न खोलें। प्रयोग में आने वाला अचार की कुछ मात्रा निकालकर अलग बर्तन में रखें।
6. बोतल हमेशा साफ, धुली व सूखी इस्तेमाल करें।
7. अचार व चटनी में पिसे हुए मसालों को हल्का सूखा भुनकर डालें। इससें अचार व चटनी जल्दी खराब नहीं होते हैं।
8. धातु के बर्तन या जार में न भरें, काँच की बोतल ही हमेशा इस्तेमाल करना चाहिए।
9. शर्बत या स्क्वाश भरते समय बोतल में उपर से थोड़ा खाली जगह अवश्य छोड़ें। इससे बोतल नहीं टूटेगी।
10. अनेक रसायनों का प्रयोग करके अचार व चटनी को टिकाऊ बनाया जा सकता है जैसे ग्लेशियल एसीटिक अम्ल जो स्वाभवतः फँफूद व कीटनाशक जैसा व्यवहार करता है। अचार तैयार हो जाने पर इसे तेल डालने से पहले अचार में मिला दें। नींबू के अचार में इसकी जरूरत नहीं है क्योंकि नींबू मे प्राकृतिक रूप से ही अम्ल की मात्रा अधिक होती है।
11. हमेशा हवा प्रतिरोधी बोतल में ही संरक्षण करें।

सब्जी प्रसंस्करण: नवीनतम दृष्टिकोण

सुधीर सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

सब्जियों का खाद्य सुरक्षा एवं पोषण सुरक्षा में विशेष महत्व है। हमारे देश की जनसंख्या 136 करोड़ तक पहुँच गयी है और जनसंख्या 1.6 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि के साथ बढ़ रही है। बढ़ती जनसंख्या वृद्धि के साथ खेत का जोत प्रति व्यक्ति निरन्तर कम हो रहा है। इसके अतिरिक्त जनसंख्या वृद्धि के साथ पानी की आवश्यकता भी बढ़ रही है। विगत वर्षों में जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा की मात्रा एवं अवधि भी सब्जी उत्पादन में प्रतिकूल प्रभाव डाल रही है। इस परिवेश में बागवानी उद्योग ने भूमि सुधार, रोजगार में आशातीत वृद्धि एवं पौष्टिक खाद्य सुरक्षा में काफी योगदान किया है। भोजन के विभिन्न घटकों में सब्जियों का विशेष स्थान है। प्रत्येक भारतीय का भोजन बिना सब्जी के अधूरा माना जाता है। सब्जियों से प्रचुर मात्रा में रेशा, खनिज लवण, विटामिन, कार्बोहाइड्रेट व प्रोटीन के अतिरिक्त शरीर को विभिन्न रोगों एवं बीमारियों से लड़ने के लिये प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करते हैं। शोध परिणामों से यह पुष्टि होती है कि सब्जियों में पाये जाने वाले विशेष कम मात्रा में मौजूद यौगिक जैसे एस्कार्बिक अम्ल, बीटा कैरोटीन, विटामिन ई एवं फाइटोकेमिकल्स शरीर की विभिन्न बीमारियों से लड़ने में सहायता प्रदान करते हैं। भारत में सब्जियों की खेती पर्वतीय क्षेत्रों से लेकर समुद्र के तटवर्ती क्षेत्रों तक की जाती है। हमारे देश में जलवायु की विभिन्नता के कारण लगभग 175 प्रकार की प्रमुख एवं अल्प प्रचलित सब्जियाँ उगायी जाती हैं जिसमें 82 पत्तेदार तथा 41 कंदीय एवं शल्क कंदीय सब्जियाँ शामिल हैं। लगभग 60 से अधिक सब्जियों का व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन होता है। कुछ प्रमुख सब्जियों का उत्पादन देश के किसी न किसी भू भाग पर किया जाता है जिससे सब्जियों की उपलब्धता पूरे वर्ष भर बनी रहती है। भारत वर्ष में विगत वर्ष में 10.47 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल पर कुल 187 मिलियन टन सब्जी का उत्पादन हुआ है। पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश एवं आन्ध्र प्रदेश पूरे देश की सब्जी उत्पादन का 50 प्रतिशत से ज्यादा सब्जी का उत्पादन करते हैं। सब्जियों का उत्पादन एक निश्चित् अवधि में होता है। सब्जियों के जीवन चक्र की इस अवधि में सब्जियों का उत्पादन माँग से अधिक होता है। इसके फलस्वरूप सब्जी उत्पादकों को अपने उत्पाद का उचित दाम नहीं मिल पाता है। उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार भारत वर्ष में कुल सब्जी उत्पादन का 20–30 प्रतिशत भाग तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन की जानकारी के अभाव एवं प्रसंस्करण की सुविधा न होने के कारण बर्बाद हो जाता है जिससे प्रतिवर्ष लगभग 15000 करोड़ रूपये का नुकसान होता है। प्रसंस्करण के द्वारा इस हानि को रोका जा सकता है और इस क्षेत्र में उद्यमिता विकास के द्वारा रोजगार सृजन की असीम संभावनायें मौजूद हैं।

सब्जियों के परिरक्षण की सरलतम विधि

- **निर्जलीकरण**

निर्जलीकरण खाद्य पदार्थों के संरक्षण एवं परिरक्षण की प्राचीनतम विधि है। इस विधि में विभिन्न खाद्य पदार्थों को एक निश्चित सीमा तक सुखाया जाता है, जिसके फलस्वरूप उसके रूप, रंग, स्वाद में बहुत कम परिवर्तन होता है एवं जीवाणु भी शीघ्र नही पनप पाते हैं इसके फलस्वरूप खाद्य पदार्थों की भण्डारण क्षमता बढ़ जाती है। प्राचीन काल से ही सब्जियों को धूप में सुखाकर निर्जलीकरण क्रिया से उसके भण्डारण व वितरण के दौरान स्वाद, रंग और संरचना में स्थाई परिवर्तन के कारण कम लोकप्रिय रहे हैं। धूप में सब्जियों के निर्जलीकरण क्रिया से निर्धारित कुल नमी की मात्रा 5 प्रतिशत से कम नहीं हो पाती

है। इस क्रम में धूप में सूखी सब्जी ज्यादा समय तक संरक्षित नहीं रह पाती है। विगत वर्षों में निर्जलीकरण प्रक्रिया पर शोध की तकनीकों में काफी सुधार हुआ है जिसके फलस्वरूप अधिकांश दोषों को काफी हद तक दूर कर लिया गया है। भारत जैसे विकासशील देश में सब्जियों के निर्जलीकरण की उपयोगी, सस्ती एवं सरल विधि विकसित की गई है। देश में विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के संस्थानों द्वारा सब्जियों में निर्जलीकरण प्रक्रिया से सब्जियों की पौष्टिकता, स्वाद, रंग, रूप एवं भण्डारण क्षमता में काफी सुधार हुआ है। निर्जलीकरण की क्रिया के दौरान सब्जियों में स्वाद, रंग, रूप, सब्जियों की पौष्टिकता एवं भण्डारण क्षमता का ध्यान रखा जाता है। सब्जियों को प्रमाणित एवं उपयुक्त रसायनों से उपचारित करके परासरणात्मक घोल में एक निर्धारित तापक्रम पर रखकर कृत्रिम निर्जलीकरण कक्ष में सुखाया जाता है। निर्जलीकृत सब्जियों को उचित प्लास्टिक की थैलियों में पैकिंग करके कमरे के तापक्रम पर भण्डारण किया जाता है। निर्जलीकरण की क्रिया संवाहन एवं संवहन के सिद्वांत पर आधारित है। संवाहन गर्म करने का तरीका है जिसमें सब्जियों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर स्टेनलेस स्टील के ट्रे में रखते हैं। ट्रे को बिजली से गर्म करते हैं जिससे सब्जियों की नमी वाष्पीकृत होकर बाहर निकल जाती है। कैबिनेट ड्रायर में पंखे की मदद से गर्मी पूरे ड्रायर में फैल जाती है। संवहन में गर्म हवा की गति शामिल है जो सब्जियों के निर्जलीकरण में सहायक होती है।

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी ने करेला, भिण्डी, फूलगोभी, हरी मिर्च, ब्रोकली, गाजर, परवल, कुन्दरू, टमाटर आदि सब्जियों के सुखाने की विधि मानकीकृत की है। इस विधि के अन्तर्गत सब्जियों को पानी से अच्छी तरह धोकर छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर खाने योग्य परिरक्षित रसायनों के घोल से एक निर्धारित तापक्रम एवं समय पर उपचारित करते हैं। खाने योग्य परिरक्षित रसायनों से ब्लाँचिंग उपचार करने से कैटलेज एवं परऑक्सीडेज एन्जाइम की क्रियाशीलता निष्क्रिय हो जाती है। इन परिरक्षित रसायनों से सब्जियों के उपचार करने से सब्जियों में विद्यमान हरा रंग, विटामिन सी की मात्रा में कम परिवर्तन होता है। उपचारित सब्जियों का हरा रंग लगभग पूरा स्थायी रहता है। इन उपचारित सब्जियों को ट्रे ड्रायर में 50–60 डिग्री सेन्टीग्रेड के तापक्रम पर 8–12 घंटे रखने से कुल नमी की मात्रा 1–2 प्रतिशत निर्धारित हो जाती है।

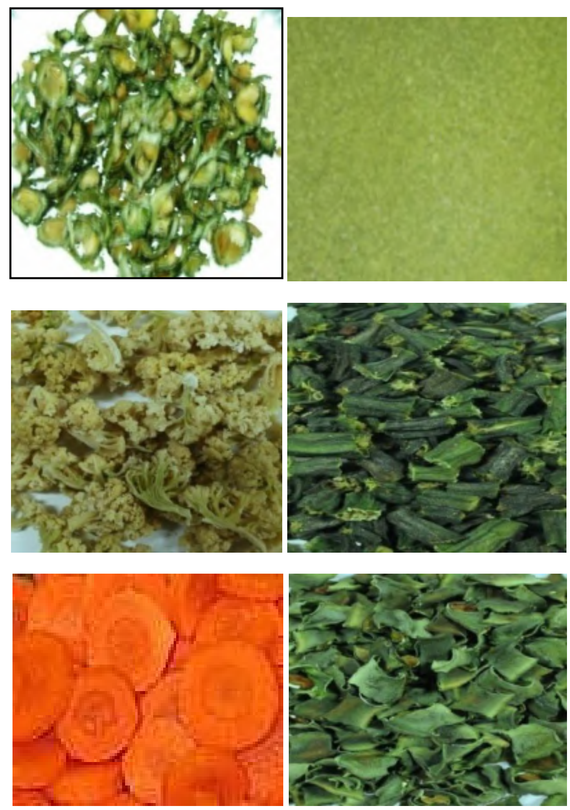

निर्जलीकृति सब्जियाँ

इस प्रकार शोध से यह पाया गया है कि उपचारित सब्जियों को निर्जलीकरण के पश्चात् प्लास्टिक थैलियों में कमरे के तापक्रम पर गुणवत्ता 6 महीने को संचालित करने के लिये एक बिजली से चलने वाला कैबिनेट ड्रायर, गर्म करने के लिये भट्टी एवं बड़े पतीले की आवश्यकता होती है। इस प्रकार 10–15 किसानों का समूह 5–6 लाख रूपये का लागत लगाकर अपनी उपजी हुयी सब्जियों को बड़े स्तर पर निर्जलीकृत कर सकते हैं। इस प्रकार ज्यादा

मात्रा में उपलब्ध सब्जियों को सुखाकर किसान अपनी आमदनी वृद्धि कर सकता है।

परिरक्षित फूलगोभी

- **परिरक्षण रसायनों में संरक्षण**

सब्जियों को परिरक्षण रसायन में रखने की विधि प्राचीन काल से चल रही है। यह विधि घरेलू स्तर पर सब्जियों को संरक्षित करने के लिये काफी उपयोगी सिद्ध हुयी है। ज्यादा मात्रा में उपलब्ध सब्जियों को घरेलू स्तर पर नमक, सिरके के घोल और बहुत कम मात्रा में उपलब्ध परिक्षण रसायन से कमरे के तापक्रम पर सब्जियों को 6–8 महीने तक संरक्षित किया जा सकता है। जाड़े में उपलब्ध लाल गाजर की लाल रंग की गुणवत्ता एवं स्वाद चीनी, साइट्रिक अम्ल और सोडियम बेन्जोएट की बहुत कम मात्रा में को कमरे के तापक्रम पर 6–8 महीने तक संरक्षित रखा जा सकता है। इस तरह से परिरक्षित लाल गाजर को सलाद एवं गाजर से बने विभिन्न व्यंजनों में उपयोग किया जा सकता है। इसी तरह फूलगोभी, करेला एवं परवल को भी नमक, सिरके, सोडियम बेन्जोएट और पोटैशियम मेटा बाई सल्फाइट की उपस्थिति में कमरे के तापक्रम पर 6–7 महीने तक संरक्षित किया जा सकता है।

परिरक्षित परवल एवं गाजर

- **सब्जियों से बनी किमची**

विभिन्न सब्जियों को किण्वन विधि से किमची तैयार किया जाता है। किण्डिवित पत्तागोभी का सेवन दक्षिण कोरिया, चीन एवं जापान में काफी प्रचलित है। विभिन्न सब्जियों जैसे– गाजर, मूली एवं खीरा को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर नमक, शहद और लाल मिर्च पाउडर के उपस्थिति में निर्धारित तापक्रम एवं कम अवधि में किमची तैयार हो जाता है। किमची में लाभकारक जीवाणुओं की संख्या काफी अधिक होती है जिससे आँत में हानिकारक जीवाणु नहीं पनप पाते हैं। इसके अतिरिक्त किमची में लाभकारी जीवाणुओं के कारण विभिन्न विटामिनों का संश्लेषण बढ़ जाता है। किमची की उपस्थिति में खाद्य पदार्थ की पाचन शक्ति बढ़ जाती है। किमची के नियमित सेवन से आँत से सम्बन्धित विभिन्न बीमारियों जैसे आँत का कैंसर आदि से छुटकारा मिल सकता है। इस प्रकार छोटे–छोटे किसान आपस में समूह बनाकर कम लागत की प्रसंस्करण की तकनीकी अपनाकर अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं और तुड़ाई उपरान्त सब्जियों को खराब होने से बचा सकते हैं। किसान भाई अपने परिवार के साथ समाज की पौष्टिक सुरक्षा में अपनी भागीदारी प्रस्तुत कर सकते हैं। सब्जी प्रसंस्करण के माध्यम से आमदनी के साथ वह रोजगार सृजन में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं।

स्वास्थ्य गुणों से भरपूर घृत कुमारी (एलोवेरा)

सुरेश कुमार वर्मा, राम चन्द्र, डी.आर. भारद्वाज, इन्दीवर प्रसाद एवं रामेश्वर सिंह

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

घृत कुमारी (एलोवेरा) मूलतः उत्तरी अफ्रीका का पौधा है। घृत कुमारी की विश्व में 275 प्रजातियाँ पायी जाती हैं, जिनमें से कुल पाँच का ही औषधीय उपयोग है। *एलोवेरा बारबेडेन्सिस* जिसे क्वारगंदल, ग्वारपाठा तथा घृत कुमारी के नाम से भी जाना जाता है। इसे हिंदी में घृत कुमारी, कन्नड में लोनिसारा, मराठी में कोरफाड़ा, घी क्वार, तेलगु में कलाबंदा, तमिल में कतरलाई, मलयालम में कुमारी व बंगाली में घृत कुमारी के नाम से जाना जाता है, परन्तु अब प्रचलित नाम घृत कुमारी (एलोवेरा) ही है। इसमें रोग निवारण गुण प्रचुर मात्रा में हैं। इसके अनगिनत फायदों के कारण ही इसे लगभग हर घर में सौन्दर्य प्रसाधन के रूप में उपयोग किया जा रहा है। इसको शीतोष्ण व उष्णकटिबन्धीय प्रक्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जाता है। इस प्रजाति को चीन, भारत, पाकिस्तान और दक्षिण यूरोप के विभिन्न भागों में सत्रहवीं शताब्दी में लाया गया था। इसका बड़े पैमाने पर कृषि उत्पादन आस्ट्रेलिया, क्यूबा, डोमिनिक गणराज्य, भारत, जमैका, दक्षिण अफ्रीका, केन्या तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में किया जा रहा है।

औषधीय दुनिया में इसे संजीवनी भी कहते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टिकोण से इसमें 18 धातु, 15 एमीनो एसिड और 12 विटामिन्स मौजूद हैं। इसमें विटामिन बी–12, फोलिक एसिड, कोलिन, विटामिन ए, सी, ई तथा विभिन्न एन्जाइम (एलीअसे, एलक्लेलाइज, एमिलेस, ब्रैडीकिनसे, कार्बोक्यसथेप्टिदासे, कैटालासे, सांईपेज, पेरोक्सीदस) तथा खनिज लवण (कैल्शियम, कॉपर, सेलेनियम, क्रोमियम, मैंगनीज, मैग्नीशियम, पोटैशियम, सोडियम, जिंक) पाये जाते हैं एवं साथ ही 12 एन्थाकुइनोंएस भी मिलते हैं जो एन्टी बैक्टीरियल तथा एन्टीवायरल के रूप में कार्य करते हैं। इसमें घाव भरने की क्षमता वाले दो हार्मोन (औरसिस तथा जिब्रेलिंस) के अलावा फैटी एसिड (कोलेस्ट्राल, काम्पेस्टेराल, बेटा सीप्टिओराल एवम् लुपोल) के साथ शर्करा भी कुछ मात्रा में पायी जाती है। वर्तमान में घृत कुमारी की खेती एक बड़े स्तर पर इसके औषधीय गुणों के कारण किया जा रहा है। इस पौधे का औषधीय रूप में प्रयोग का सीधे वैज्ञानिक तौर पर पुष्टि नहीं हो पायी है कि कौन सा कारक किस रोग में कार्य करता है। इसे कम वर्षा वाले क्षेत्रों तथा शुष्क पठारी भूमि में काफी आसानी से उगाया जा रहा है तथा अच्छी आमदनी के कारण किसानों में काफी लोकप्रिय हो रहा है। ऐलोवेरा का पौधा हिमपात तथा पाला सहने में असमर्थ होता है। साथ ही गमलों में सजावटी पौधों के रूप में छत पर आसानी से उगाया जा सकता है (चित्र)।

छत पर मातृ पौधों का गमलों में संरक्षण

ऐलोवेरा पौधों का उत्पादन

एलोवेरा को सभी सभ्यताओं ने एक औषधीय पौधे के रूप में मान्यता दी गयी है और प्राप्त विवरणों के अनुसार इसका प्रयोग औषधीय रूप में पहली शताब्दी से किया जा रहा है, जिसका उल्लेख आर्युवेद के प्राचीन ग्रन्थों में पौराणिक काल से ही मिलता है। इसे आर्युवेद में महाराजा का स्थान मिला है। यह जहाँ मधुमेह (डायबिटीज), बवासीर, पेट एवं गर्भाशय के रोग, जोड़ों के दर्द, त्वचा की खराबी, चेहरे के दाग धब्बों के लिए लाभप्रद है वहीं दूसरी तरफ खून की कमी को दूर करता है तथा शरीर की प्रतिरोधक

क्षमता बढ़ाता है। इसकी पत्तियों में निकला रस सुबह 2–3 चम्मच खाली पेट लेने से दिन भर शरीर में शक्ति व चुस्ती–स्फूर्ति बनी रहती है। इसमें एंटी बैक्टीरियल व एंटीफंगल गुण पाया जाता है। इसका गूदा या जैल जोड़ों के दर्द, मुहाँसे, रूखी त्वचा, धूप से झुलसी त्वचा, झुर्रियों, चेहरे के दाग धब्बों, आँखों के काले घेरों व फटी एड़ियों के लिए लाभप्रद है। एलोवेरा ने अपने गुणों के चलते ब्यूटी क्षेत्र में धूम मचा रखी है। आजकल सौन्दर्य निखार के लिए एलोवेरा जैल, बाडी लोशन, हेयर जैल, स्किन जैल, शैंपू, साबुन, फेशियल फोम, ब्यूटी क्रीम तथा हेयर स्पा. ब्यूटी पार्लरों में हर्बल कास्मेटिक प्रोडक्ट्स के रूप में धड़ल्ले से प्रयोग किया जा रहा है।

स्वास्थ्य हेतु ऐलोवेरा का उपयोग

- **मोटापे की समस्या :** भारतवर्ष में आजकल हर दूसरा–तीसरा व्यक्ति मोटोपे की समस्या से ग्रसित है। असंतुलित खान–पान तथा सही ढंग से शारीरिक क्रिया न करने से कई लोग वजन बढ़ने की समस्या से ग्रसित हैं। ऐसे में ऐलोवेरा जूस का नित्य, खाली पेट सेवन, इस समस्या से छुटकारा दिलाने में काफी कारगर सिद्ध हो सकता है क्योंकि इसमें एंटीइन्फ्लेमेटरी गुण होता है। यह ऊर्जा खपत को बढ़ाता है तथा शरीर में फैट (कोलेस्ट्राल) जमाव को कम करने में सहायक है।
- **रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि** : यह कोशिकाओं को नाइट्रिक आक्साइड और साइटोकाइनिन्स का उत्पादन करने के लिए प्रेरित करता है जो शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता को बेहतर करते हैं। रात्रि में सोने से पहले एलोवेरा जूस का सेवन सेलुलर और ह्यूमोरल (शरीर में एक प्रकार का पाया जाने वाला द्रव्य), इम्यून को उत्तेजित करता है। नेशनल कैंसर इंस्टीट्यूट द्वारा भी इस तथ्य की पुष्टि की गई है।
- **एलोवेरा एवम् पाचन क्रिया :** ऐलोवेरा में लैक्सेटिव (पेट साफ करने की प्राकृतिक दवा) होता है जो पाचन क्रिया में मदद करता है। यह पाचन क्रिया सही रखता है तथा कब्ज व आईबीएस (आंत संबंधी बीमारी) को ठीक करता है। यह एच पाइलोरी एवं गैस्ट्रिक संक्रमण के विरूद्ध एंटी बैक्टीरियल का कार्य करता है, लेकिन अल्सरेटिव कोलाइटिस में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- **मानसिक स्वास्थ्य :** ऐलोवेरा में मौजूद सैकराइड्स स्मरण शक्ति को मजबूती प्रदान करती है व तनाव को कम करती है।
- **शारीरिक सूजन या जलन :** शरीर में आक्सीडेटिव क्षति जो मुक्त कणों की वजह से होती है तथा इससे कोशिकाओं को नुकसान होता है व सूजन होने लगती है, इसको ऐलोवेरा में उपस्थित एंटी–आक्सीडेंटस सूजन के प्रादुर्भाव में कमी लाता है।
- **स्वस्थ्य हृदय व ऐलोवेरा :** ऐलोवेरा एथेरोस्क्लेरोसिस रोकने में सहायक है। फाइटोथेरेपी रिसर्च में प्रकाशित अध्ययन के अनुसार ऐलोवेरा के नियमित सेवन से टाइप टू वाले डायबटीज के मरीजों में ब्लड शुगर के स्तर में गिरावट आती है तथा इसका पौधा कार्डियोप्रोटेक्टिव गतिविधि में अहम् भूमिका निभाता है।
- **त्वचा निखार हेतु ऐलोवेरा का प्रयोग** : धूल मिट्टी व बढ़ते प्रदूषण के कारण त्वचा बेजान व रूखी होने लगती है। ऐसे में ऐलोवरा का चेहरे पर उपयोग से चमक पुनः लौटने लगती है व त्वचा में निखार आने लगता है क्योंकि ऐलोवेरा में उपस्थित सोडियम कार्बोनेट, सोडियम पाल्मेट व ग्लिसरीन जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं।

अतः हम सभी को इस आपाधापी के युग में इस पौधे में उपस्थित तत्वों का सदुपयोग करना चाहिए।

बहुपयोगी अजवायन

राम चन्द्र, रामेश्वर सिंह, एस.के. वर्मा, ओ.पी. ऐश्वथ[1] एवं बी. सिंह
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश
[1]*भा.कृ.अनु.प. राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केन्द्र, तबीजी– 305 206 अजमेर, राजस्थान*

अजवायन (*ट्रेकीस्परगम अम्मी*) एक वर्षीय शाकीय पौधा है जो एपिएसी कुल के अन्तर्गत आता है। इसकी उत्पत्ति भारत से हुई है। पत्तियों एवं बीज का प्रयोग मसाला एवं औषधि के रूप में किया जाता है। इसका स्वाद खट्टा एवं तीखा होता है। थाइम की तरह फल में सुगन्ध होती है, क्योंकि इसमें थायमोल पाया जाता है। इसकी पत्तियों एवं फूलों से भी तेल निकाला जाता है जिसमें 35–60 प्रतिशत थायमोल पाया जाता है। इसकी खेती मुख्य रूप से ईरान एवं भारत में होती है। भारत में कुल उत्पादन का 55 प्रतिशत राजस्थान में होता है। भारतीय पाक शैली में इसका प्रयोग कई मसालों में मिलाकर छौंक लगाने में किया जाता है। अजवायन की पत्तियों का खाने में प्रयोग नही किया जाता है।

औषधीय उपयोग

अजवायन का उपयोग पेट से सम्बन्धित परम्परागत बीमारियों जैसे– अपच, पेट फूलना, दस्त आदि को ठीक करने के लिए किया जाता है।

पूर्ण विकसित अजवाइन

पुष्पन अवस्था में अजवाइन

जलवायु

भारत में इसकी खेती रबी में की जाती है। शुष्क जलवायु में इस पौधे की वृद्धि एवं बीज का उत्पादन अच्छा होता है। लगातार बादल वाला मौसम में कीट एवं बीमारियाँ अधिक होती है। तापमान 15–27 सेन्टीग्रेड एवं 60–70 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता इसकी वृद्धि एवं फूलने के लिए ठीक रहता है। इसकी खेती खरीफ मौसम में भी की जा सकती है।

मृदा

उत्तम जल निकास वाली दोमट मिट्टी इसकी खेती के लिए उत्तम रहती है, लेकिन सभी प्रकार की मृदा में इसकी खेती की जा सकती है। वर्षा आधारित फसल के लिए भारी मृदा उपयुक्त रहती है।

उन्नतशील किस्में

अजमेर अजवायन–1, अजमेर अजवायन–2, अजमेर अजवायन–93, अजमेर अजवायन–1, गुजरात अजवायन–1, लाम सेलेक्शन–1, लाम सेलेक्शन–2, पंत रूचिका

मृदा तैयारी

पहली जुताई मोल्ड बोल्ड प्लाऊ से एवं 2–3 जुताई कल्टीवेटर/हैरो से करके मिट्टी भुरभुरी बना लेते हैं। प्रत्येक जुताई के बाद पाटा लगाकर नमी को संरक्षित करना आवश्यक होता है।

बुआई का समय

भारत में रबी फसल की बुआई सितम्बर–अक्टूबर एवं वर्षा आधारित फसल की बुआई मध्य अगस्त में करके दिसम्बर–जनवरी तक कटाई की जाती है।

बीज दर

रबी मौसम में बुआई के लिए 2.5–3.0 किग्रा./हे. बीज की आवश्यकता होती है। अच्छे अंकुरण के लिए खेत में पर्याप्त नमी रहना आवश्यक होता है।

बीज उपचार

अधिक उपज के लिए बीज को *एजोस्पीरिलम* या *एजोटोबैक्टर* से उपचारित कर लेना चाहिए। बीज जनित बीमारियों से बचाव के लिए कार्बेन्डाजिम/थीरम (2.5 ग्रा./किग्रा.) से बीज उपचारित कर लेना चाहिए।

बुआई की विधियाँ

इसकी बुआई पंक्तियों में की जाती है। सिंचित क्षेत्र में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सेमी. एवं वर्षा आधारित क्षेत्र में 30 सेमी. रखते हैं। बुआई के 10–12 दिन बाद बीज अंकुरित हो जाते हैं। अजवायन का बीज छोटा होता है, इसलिए इसकी बुआई की गहराई 1.0–1.5 सेमी. से अधिक नहीं होना चाहिए। बुआई के पहले बीज के साथ सूखा बालू मिला लेने से बीज का छिटकाव एक समान होता है।

खाद एवं उर्वरक

खेत की जुताई के पहले 10 टन गोबर की सड़ी खाद खेत में बिखेर देते हैं। अन्तिम जुताई के पहले 30 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फास्फोरस एवं 30 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर खेत में बिखेरना चाहिए एवं 15 किग्रा. फूल आने के ठीक पहले देना चाहिए। वर्षा आधारित फसल के लिए 40 किग्रा. नत्रजन एवं 20 किग्रा. फास्फोरस एवं पोटाश प्रति हे. बुआई के पहले खेत में बिखेरना चाहिए।

सिंचाई

अजवायन की पूरी फसल अवधि में 4–5 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। जलवायु एवं मृदा के आधार पर 15–25 दिन के अन्तर पर सिंचाई करना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण

अजवायन की शुरूआती वृद्धि धीमी होती है इसलिए प्रारम्भ में खेत को खरपतवार रहित रखना आवश्यक होता है। फसल बुवाई के बाद 30 दिन तक खरपतवार रहित रखने के लिए प्री इमरजेन्स खरपतवार नाशी जैसे– पेन्डीमेथेलीन 1 लीटर सक्रिय तत्व/हे. की दर से बुआई के 24–72 घण्टे के अन्दर छिड़काव करना चाहिए। खरपतवार नाशी छिड़काव के समय मृदा में नमी रहना आवश्यक होता है।

फसल सुरक्षा

अजवाइन की फसल में कीट एवं बीमारियाँ कम लगती हैं, लेकिन कभी–कभी माहूँ, हरा फुदका, जड़ गलन एवं चूर्णिल आसिता रोग का प्रकोप हो जाता है।

कीट प्रबंधन

- **माहूँ**

इसके प्रकोप से पत्तियाँ एवं मुलायम शाखाएं ज्यादा प्रभावित होती हैं, जो बाद में सूख जाती हैं। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड (0.05 प्रतिशत) या थायोमेथाक्जाम (0.025 प्रतिशत) या डायमेथोएट (0.33 प्रतिशत) का 10–15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करना चाहिए।

- **जड़ गलन (*राइजोक्टोनिया सोलेनी*)**

यह मृदा जनित बीमारी है जिसके प्रकोप से पत्तियाँ पीली पड़ने लगती है एवं बाद में पौधे सूख जाते हैं। अजवायन फसल की यह एक गम्भीर बीमारी है। इसके नियंत्रण के लिए बीज को थीरम/कैप्टान 3 ग्राम/किग्रा. बीज उपचारित कर बुआई करें। बीमारी की शुरूआत में कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) की ड्रेन्चिंग करें एवं 1 महीने बाद इस प्रक्रिया को दुहरायें। गर्म क्षेत्रों में खेत की गहरी जुताई एवं उचित फसल चक्र अपनायें। *एजोस्पीरिलम* या *एजेटोबैक्टर* से बीज उपचार करने पर इसका संक्रमण कम होता है।

- **चूर्णिल आसिता**

यह बीमारी फसल की परिपक्व अवस्था में आती है। इसके प्रकोप से पत्तियों पर सफेद कवक की वृद्धि दिखाई देती है। चूर्णिल आसिता के नियंत्रण के लिए सल्फर 25 किग्रा./हे. या घुलनशील सल्फर या केराथेन (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव फूल आने के समय एवं दूसरा छिड़काव 15 दिन बाद करने से इस बीमारी से नुकसान नही हो पाता है।

फसल कटाई एवं उपज

किस्म एवं मौसम के अनुसार 130–180 दिन में फसल तैयार हो जाती है। प्रायः कटाई फरवरी से मई के मध्य की जाती है। परिपक्व अवस्था में फूल समाप्त हो जाते हैं। बीज विकसित होकर भूरा हो जाता है। फसल को हंसिया से कटाई करके बण्डल बनाकर थ्रेसिंग फ्लोर पर सुखाने के बाद डंडे से पीटकर मड़ाई करते हैं। वर्षा आधारित फसल की उपज 0.4–0.6 टन/हेक्टेयर होती है जबकि सिंचित फसल की उपज 1.2–1.5 टन/हेक्टेयर होती है।

आलू भण्डारण की सुरक्षित तकनीकें

सिद्धार्थ कुमार सिंह एवं राज कुमार सिंह[1]
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश
[1]केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, सहायनगर, पटना, बिहार

अपने देश में आमतौर पर आलू के मुख्य फसल की खुदाई फरवरी और मार्च महीनों में की जाती है। खुदाई के बाद गर्मी एवं फिर बरसात का मौसम प्रारम्भ हो जाता है। गर्मियों में तापमान काफी अधिक व आर्द्रता कम रहती है जबकि इसके विपरीत बरसात के मौसम में तापमान एवं आर्द्रता दोनों ही अधिक रहता है। ऐसी परिस्थितियों में आलू का सुरक्षित भण्डारण मुश्किल हो जाता है। जब तक बाजार में नया आलू (अगले फसल से) नही आ जाता तब तक उपभोक्ताओं की माँग को पूरा करने के लिए आलू का भण्डारण करना एक मात्र विकल्प बचता है। इसके अलावा पर्याप्त शीतभण्डार गृहों की सुविधा नही होने के कारण फसल खुदाई के तुरन्त बाद आलू की कीमतों में गिरावट भी देखने को मिलती है। अतः इस समस्या से छुटकारा पाने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि खुदाई के तुरंत बाद आलू को बाजार में न भेजकर उन्हें भण्डारित कर लिया जाये। आलू की बेहतर किस्म का चयन, सही समय पर भण्डारण, रसायन का समयानुसार उपचार, आलूओं का उन्नत तकनीक द्वारा भण्डारण, तापमान व आर्द्रता का नियंत्रण व खाने व प्रसंस्करण के लिए आलू की उपयोगिता जैसे– बातों को ध्यान में रखते हुए आलू का भण्डारण हो तो भरपूर लाभ उठाया जा सकता है।

आलू के भण्डारण का उद्देश्य

आलू का भण्डारण दो मुख्य उद्देश्यों के लिए किया जाता है:

- **बीज के लिए आलू का भण्डारण**

बीज के लिए रखे जाने वाले आलू के भण्डारण से पूर्व कन्द का छिलका पूर्ण रूप से परिपक्व हो गया हो, इसकी जाँच आवश्यक है। इसके अलावा आलू के ढेर से कटे एवं खराब आलू को छाँटकर निकाल देना चाहिए। सामान्यतः 3 प्रतिशत बोरिक एसिड के घोल से उपचारित कर व सुखाकर ही भण्डारित करना चाहिए। बीज आलू के भण्डारण के लिए सबसे उपयुक्त विधि शीत भण्डारण की है जिसमें आलू को 2–4 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा 90–95 प्रतिशत आर्द्रता पर भण्डारित किया जाता है। ऐसी दशा में आलू में अंकुरण नही होता है तथा न ही कन्दों के भार में ज्यादा कमी आती है। इस प्रकार से आलू को सफलतापूर्वक 8 से 9 महीनों के लिए भण्डारित कर लिया जाता है जो अगली फसल की बुआई के लिए प्रयुक्त होता है।

- **भोज्य आलू का भण्डारण**

भोज्य आलू भण्डारण के लिए भी सबसे उपयुक्त विधि शीत भण्डारण ही है जिसमें आलू को 2–4 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा 90–95 प्रतिशत आर्द्रता पर भण्डारित किया जाता है। ऐसी दशा में आलू में अंकुरण नहीं होता है तथा न ही कन्दों के भार में ज्यादा कमी आती है। आवश्यकतानुसार शीत भण्डार से निकालकर उपभोक्ता के माँग के अनुसार बाजार में अच्छे मूल्य पर बेच दिया जाता है।

प्रसंस्करण योग्य आलू का भण्डारण

प्रसंस्करण योग्य आलू का भण्डारण दो विधियों द्वारा किया जाता है:

- **पारंपरिक भण्डारण**

इस विधि में किसान अपने खेतों अथवा घरों के आसपास ही आलू को भण्डारित करते हैं। इसमे केवल 3–4 महीने तक ही आलू को भण्डारित किया जा सकता है क्योंकि वर्षा प्रारम्भ होने के पश्चात् ये भण्डार गृह कारगर नही रह पाते हैं। अतः इन्हें अधिक समय तक उपयोग नही किया जा सकता है। अधिकतर प्रदेशों में आलू को ढेर लगाकर या फिर

गड्ढों में डालकर भण्डारित किया जाता है। इन पारंपरिक विधियों में लगभग 10–40 प्रतिशत तक नुकसान उठाना पडता है। अतः भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश) द्वारा इन विधियों को और अधिक कारगर बनाने के लिए इनमें सुधार लाने का प्रयत्न किया गया है, जो इस प्रकार है:

- अध्ययनों के फलस्वरूप यह पाया गया है कि नये तरीके में आलूओं को पेड़ों की छाया या सरकण्डे से बनी कच्ची छत के नीचे ढेर लगाकर भण्डारित करना बहुत आसान है। आलू के ढेर लगाकर खेत में ही उपलब्ध धान के पुआल की 30–60 सेमी. मोटी तह लगाकर चारों तरफ से ढक दिया जाता है। ध्यान रहे कि आलू का ढेर 1.5 मीटर से ज्यादा ऊँचा नही हो। ढेर के बीच में छिद्रयुक्त प्लास्टिक पाइप डालने से भण्डारण के दौरान श्वसन क्रिया से बनने वाली कार्बन डाइआक्साइड गैस के निकासी में सहायता मिलती है। बड़े ढेरों में हवा के आवाजाही के लिए निचली सतह पर वेंटीलेटर लगाने चाहिए जो तिकोने या चौकोर हो सकते हैं तथा इन्हें लकड़ी की फट्टियों से बनाया जा सकता है।
- गड्ढों में आलू को भण्डारित करने के लिए पेड़ की छाया में कच्चे गड्ढे की अंदर की परत पर ईटें लगाकर पक्का बना दिया जाता है। वायु प्रबन्धन के लिए गड्ढों में जमीन से लगभग 60 सेमी. उपर व 5 सेमी. की दूरी पर बॉस के डंडें बाँधकर प्लेटफार्म बनाया जाता है तथा छिद्रयुक्त प्लास्टिक पाइप को आलू के ढेर के बीच खड़ा कर दिया जाता है। यदि बरसात की संभावना हो तो बिना छप्पर वाले भण्डारित आलू को तिरपाल से ढक देना चाहिए ताकि उसमे पानी अंदर प्रवेश ना कर सके।
- ढेर व गड्ढों में भण्डारित आलूओं में अंकुरण की रोकथाम के लिए इन्हें सी.आइ.पी.सी. रसायन से उपचारित किया जा सकता है। इससे भण्डारण का समय भी लगभग दो सप्ताह अधिक बढ़ाया जा सकता है। सी.आइ.पी.सी. का उपचार ढेर लगाते समय आलूओं पर अच्छी गुणवता के स्प्रे पम्प से छिड़काव आसानी से किया जा सकता है। इससे भण्डारित आलू को बाजार भेजने से पहले उनके अंकुरण तोडने की आवश्यकता नहीं पडती। भण्डारित आलू ठोस दिखते हैं तथा इनकी कीमत भी अच्छी मिलती है।

- **प्रसंस्करण योग्य आलू का बढ़े तापमान पर शीत भण्डारण**

देश में सभी प्रकार के आलू का भण्डारण शीत भण्डार गृह में 2–4 डिग्री सेल्सियस पर किया जाता है क्योंकि इस तापमान पर भण्डारित आलू में अंकुरण नही होता तथा वजन में बहुत कम गिरावट होती है। परन्तु जब आलू को इतने कम तापमान पर रखा जाता है, तब कन्दों में अवकारक शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है जिसके कारण आलू मीठे हो जाते हैं। उपभोक्ता इन्हें पसंद नही करते हैं लेकिन विकल्प के अभाव में इन्ही आलू को खाना पडता है। प्रसंस्करण के लिए ये आलू अनुपयुक्त होते हैं क्योंकि अत्यधिक शर्करा के कारण जब इनका प्रसंस्करण किया जाता है तो इनसे भूरे या काले रंग के प्रसंस्कृत उत्पाद प्राप्त होते हैं जिन्हे पसंद नही किया जाता है। अतः प्रसंस्करण में उपयोग आने वाले आलू का भण्डारण अधिक तापमान पर करने की आवश्यकता होती है। संस्थान द्वारा किये गये अध्ययन में यह पाया गया कि 10–12 डिग्री सेल्सियस तापमान पर भण्डारित आलू में शर्करा की मात्रा 2–4 डिग्री सेल्सियस पर भण्डारित आलू के अपेक्षा काफी कम पाया गया जिसके फलस्वरूप आलू मीठे नहीं लगते। प्रसंस्करण के लिए इन आलू की उपयोगिता को देखने पर यह पाया गया कि आलू की कुछ किस्में जैसे–कुफरी चिप्सोना–1, कुफरी चिप्सोना–2, कुफरी चिप्सोना–3, कुफरी ज्योति, कुफरी चंद्रमुखी व कुफरी लवकार को इस तकनीक द्वारा भण्डारण करना प्रसंस्करण की दृष्टि से अत्यधिक उपयोगी है।

भण्डारण पूर्व आलू की खुदाई के बाद ध्यान देने योग्य बातें:

- आलू के तने काटने के 15–20 दिन बाद जब कन्दों का छिलका परिपक्व हो जाये तभी खुदाई करनी चाहिए।
- इसके अलावा छिलका पकाने व घावों को भरने के लिए खुदाई के 10–15 दिन तक आलू को ढेर मे क्योरिंग के लिए रखते हैं।
- भण्डारण से पूर्व कटे एवं खराब कन्दों को छाँट कर अलग कर लेते हैं।
- आलू की खुदाई के तुरन्त बाद छायेदार स्थान पर ढेर लगाकर रखना चाहिए। आलू को ठंडे में खोद लेना चाहिए तथा तेज धूप से बचाना चाहिए।

भगवत गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं, '' मैं किसी का भाग्य नहीं बनाता हूँ, हर कोई अपना भाग्य खुद बनाता है। तुम आज जो कर रहे हो उसका फल तुम्हें कल प्राप्त होगा, और आज जो तुम्हारा भाग्य है वह तुम्हारे पहले किए गए कर्मों का फल है''

व्यवसायिक सब्जी उत्पादन के लिए क्या करें एवं क्या नहीं करें?

एस.एम. वनिता एवं ए.टी. रानी

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

भारतीय किसान, मानसून एवं बाजार के बीच सामन्जस्य बैठाने में परेशान रहता है। फसल उत्पादन से विपणन के मध्य बहुत सारे जोखिम बने रहते हैं जिसका निर्णय उत्पादक को स्वयं लेना पड़ता है, जैसे– कौन सी फसल उगायें, कैसे उगायें एवं कहाँ पर विक्रय करें?। सब्जियों के सम्बन्ध में यह और भी संकटपूर्ण होता है क्योंकि अधिकतर उत्पादों का सरकारी समर्थन मूल्य निर्धारित नही होता है। कृषक सब्जी उत्पादन में कीटों, बीमारियों एवं मूल्य में उतार–चढ़ाव के कारण अधिक परेशान होता है। सब्जियाँ शीघ्र खराब हो जाने के कारण इसका भण्डारण अधिक दिनों तक नही हो सकता एवं दूर के बाजार में भेजने के योग्य भी नही होती हैं। इन सबके बावजूद छोटे एवं सीमान्त किसान कम दिनों में अधिक आय लेने हेतु सब्जियों की खेती पर ही निर्भर होते हैं। सब्जियों को कृषि लागत अधिक होने के कारण किसान अपने उत्पाद से अधिक आय की आशा करता है। अब कृषि को व्यवसाय नही कृषि व्यापार की तरह देखा जा रहा है जहाँ किसान को शेयर होल्डर समझा जाता है। यह केवल बड़े जोत वाले किसानों के लिए सम्भव है जबकि छोटे एवं सीमान्त किसानों को एक तरह की रूचि वाले किसानों का समूह बनाकर कृषि उत्पादक कम्पनी बनाने की जरूरत है। बाजार में गुणवत्तायुक्त उत्पाद को अच्छा मूल्य प्राप्त होता है एवं सरकारी योजनाओं का लाभ मिलता है एवं जोखिम में भी कमी आती है। छोटे एवं सीमान्त किसानों को लाभदायक कृषि व्यवसाय के लिए क्या करें एवं क्या न करें की सूची नीचे दी जा रही है:

क्या करें?

1. किसी स्थानीय किसान समूह या एफ.पी.ओ. /एफ.पी.सी./सहकारी विपणन संस्थान में सम्मिलित हों।
2. मौसम के अनुसार उगायी जाने वाली फसलों की सूची तैयार करें।
3. स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों का मूल्यांकन करें।
4. फसल लागत (बीज, उर्वरक, फसल सुरक्षा रसायन) की विस्तृत सूची बनाकर रखें जिससे अनावश्यक घटकों को क्रय करने की आवश्यकता न पड़े।
5. फसल लेने से पहले बाजार का सर्वेक्षण करें और प्रत्येक महीने की माँग एवं मूल्य की सूची बनायें एवं उसी अनुसार फसल एवं बुवाई के समय का चयन करें।
6. कृषि साख (क्रेडिट) जिस पर सरकारी सहायता प्राप्त हो राष्ट्रीय बैंक या साख सहकारी संस्था से प्राप्त करें।
7. कृषि मशीनरी एवं उपकरण का समय से उपयोग करने हेतु ऐसी संस्था से सम्पर्क करें जो भाड़े पर यंत्र उपलब्ध कराते हैं या आस–पास के किसानों से भाड़े पर प्राप्त कर उपयोग करें।
8. प्रत्येक दिन का व्यय का विवरण रजिस्टर में लिखें।
9. मृदा स्वास्थ्य का रख–रखाव बहुत महत्वपूर्ण है, इसलिए मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की जाँच करायें एवं उसी अनुसार खेत में उर्वरकों का प्रयोग करें। आवश्यकता से अधिक रसायनों के प्रयोग से बचें। अधिक से अधिक कम्पोस्ट एवं जैविक उर्वरकों का प्रयोग करें।
10. सरकार द्वारा पंजीकृत संस्था से उर्वरक एवं फसल सुरक्षा रसायन क्रय करें। बीज अच्छी गुणवत्ता वाला एवं रोग रहित का प्रयोग करें।

11. मुख्य कीटों से बचाव हेतु प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग करें।
12. फसल में कीटों के संक्रमण का निरीक्षण करें जिससे समय से सुरक्षित कीटनाशी का प्रयोग करें। तना एवं फल छेदक कीट नियंत्रण के लिए फेरोमेन ट्रैप का प्रयोग करें। पीली स्टिकी ट्रैप का प्रयोग थ्रिप्स, सफेद मक्खी एवं माहूँ के नियंत्रण के लिए करें।
13. नुकसानदायक एवं लाभदायक कीटों की पहचान करें एवं चमकीली प्लास्टिक पलवार का प्रयोग करें इससे चूसने वाले कीटों की संख्या कम हो जाती है।
14. कीट एवं बीमारी के नियंत्रण के लिए संस्थान द्वारा विकसित एकीकृत नियंत्रण विधि का प्रयोग करें जिसमें कृषि क्रियाएं, बीज उपचार एवं जैविक कीटनाशियों का प्रयोग दिया गया है।
15. क्षेत्र विशेष के लिए अनुमोदित सस्य क्रियाओं का प्रयोग अवश्य करें।
16. स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का अधिक से अधिक प्रयोग करें।
17. सिंचाई के लिए पानी का अधिकतम उपयोग हेतु ड्रिप सिंचाई/स्प्रिंकलर सिंचाई/नाली में सिंचाई करें।
18. कृषि विविधता द्वारा जोखित घटाने के लिए अन्तरवर्ती फसल/मिश्रित फसल/ट्रैप फसल उगायें।
19. फसल अवशेष को मृदा में मिलायें एवं नेडप कम्पोस्ट/वर्मीकम्पोस्ट का प्रयोग करें।
20. कृषि के साथ–साथ पशुपालन/मुर्गी पालन/मधुमक्खी पालन करें, इससे जोखिम कम हो जाता है।
21. घर के आस–पास खाली जमीन में सब्जियाँ उगायें जिससे घर के लोगों की पोषण सुरक्षा में वृद्धि होती है।
22. सब्जियों के उगाने के समय में परिवर्तन करें जिससे बाजार मूल्य अच्छा मिलें।
23. सब्जियों की सुधरी किस्मों एवं सस्य तकनीकों की जानकारी के लिए शोध संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों, राजकीय कृषि विभागों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों से सम्पर्क करें।
24. अधिक आय के लिए कृषि की ऐसी तकनीकों का प्रयोग करें जिससे लागत कम हो एवं गुणवत्ता बढ़ जाये।
25. जहाँ तक सम्भव हो फसल ऋण (लोन) लेने पर फसल उत्पादन सुनिश्चित करें।
26. सरकारी संस्थानों द्वारा आयोजित होने वाले किसान मेला, किसान गोष्ठी, किसान प्रशिक्षण एवं प्रदर्शन में भाग लेने हेतु क्षेत्रीय कृषि अधिकारी/प्रसार अधिकारी के सम्पर्क में रहें।
27. विभिन्न कार्यक्रमों एवं योजनाओं के बारे में अद्यतन जानकारी हेतु डिजिटल टूल, इण्टरनेट, मोबाइल एप एवं अन्य कृषि सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग करें। बाजार मूल्य की अद्यतन जानकारी हेतु ई– नाम, एम मार्कनेट वेबसाइट आदि का उपयोग करें।
28. समूह में उत्पाद एकत्रित कर विपणन करने से अच्छा बाजार मूल्य मिलता है।
29. बाजार में भेजने से पहले सब्जियों की सफाई, श्रेणीकरण अवश्य करें जिससे बाजार मूल्य अच्छा मिलता है।
30. सब्जियों के विपणन हेतु आनलाइन विपणन/व्यापार करने से स्थानीय स्तर पर अधिकता होने पर अन्य स्थानों पर विक्रय करने से अच्छा मूल्य मिलता है।

क्या नहीं करें?

1. आवश्यकता से अधिक या कम उर्वरकों एवं रसायनों का प्रयोग न करें। यह मृदा को प्रदूषित करता है एवं किसान के कल्याण को प्रभावित करता है।
2. अवैज्ञानिक सस्य तकनीकों का प्रयोग न करें।

3. सब्जियों की कटाई/तुड़ाई के पहले फसल सुरक्षा रसायनों का प्रयोग कदापि न करें। रसायन अवशेष युक्त सब्जियाँ स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक होती हैं।
4. प्राकृतिक संसाधनों जैसे– मृदा, जल, हवा को हानिकारक रसायनों के प्रभाव से बचायें।
5. सब्जियों का विक्रय प्रक्षेत्र या प्रक्षेत्र के आस–पास करने से बचें।
6. सब्जी विक्रय से घर के पोषण सुरक्षा हेतु आवश्यक सब्जी अपने उपयोग के लिए रखें।
7. कीट/रोग प्रभावित सब्जियों को बाजार में विक्रय के लिये न लायें।
8. प्रक्षेत्र पर केवल एक ही तरह की फसल न उगायें।
9. खर–पतवार को फसल में न रहने दे बल्कि समय से नियंत्रण करें।
10. प्रक्षेत्र के ढाल को बिना ध्यान में रखें मेड़ एवं जल निकास नाली न बनायें।
11. फसल अवशेष खेत में न जलाये बल्कि इसका प्रयोग खेत की उर्वरता बढ़ाने के लिए करें या पशुओं के लिए चारा के रूप में प्रयोग करें। इनका उपयोग कम्पोस्ट बनाने के लिए भी किया जा सकता है।
12. लगातार एक या एक ही परिवार की फसल एक ही प्रक्षेत्र में न उगाये। ऐसा करने पर कीट एवं बीमारियों का प्रकोप बढ़ जाता है। उदाहरण के लिए टमाटर के बाद मिर्च या बैंगन की फसल नहीं उगाना चाहिये क्योंकि सभी सोलेनसी परिवार से सम्बन्धित हैं।
13. खेत को परती (बिना फसल उगाये) न छोड़ें। ऐसा प्रक्षेत्र जिसमें जल भराव होता है या जिसमें सिंचाई की सुविधा न हो, ऐसे प्रक्षेत्रों पर जल भराव प्रतिरोधी/सूखा रोधी फसल उगायें। ऐसे प्रक्षेत्रों का प्रयोग मछली पालन, बत्तख पालन या जल भण्डारण टैंक के लिए भी कर सकते हैं।
14. विपणन के दौरान व्यापारी या मध्यस्थ व्यक्ति (मिडिल मैन) को अनावश्यक दलाली (कमीशन) न दें। बाजार में नियम एवं कानून की जानकारी पहले ही प्राप्त कर लें।
15. साहूकार से ऋण लेने से बचें। राष्ट्रीयकृत बैंकों एवं सहकारी समितियों से ऋण प्राप्त करें।

बडे–बडे दिग्गज बह जायेंगे। छोटे–मोटे की तो बात ही क्या है! तुम लोग कमर कसकर कार्य में जुट जाओ, हुंकार मात्र से हम दुनिया को पलट देंगे। अभी तो केवल मात्र प्रारम्भ ही है। किसी के साथ विवाद न कर हिल–मिलकर अग्रसर हो, यह दुनिया भयानक है, किसी पर विश्वास नहीं है। डरने का कोई कारण नहीं है, माँ मेरे साथ हैं, इस बार ऐसे कार्य होंगे कि तुम चकित हो जाओगे। भय किस बात का? किसका भय? वज्र जैसा हृदय बनाकर कार्य में जुट जाओ। (विवेकानन्द साहित्य खण्ड–४पन्ना–३१५)

राजभाषा हिंदी को जानें!

आत्मानंद त्रिपाठी

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी–221 305, उत्तर प्रदेश

14 सितम्बर 1949 को संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी को संविधान सभा द्वारा स्वीकार किया गया। हम लोग सन् 1953 से अनवरत हिंदी दिवस मनाते आ रहे हैं पर व्यवहारिक रूप से हिंदी वहीं की वहीं रह गयी। संविधान के अनुच्छेद 6 में वर्णित 22 भाषाओं में से हिंदी 40 प्रतिशत जनमानस द्वारा बोली जाती है। इसे द्विभाषी के रूप में विद्यालय के पाठ्यक्रमों में प्रयोग किया जा रहा है। हिंदी राजभाषा है, राजसत्ता की भाषा नही है। यह संघर्ष की भाषा है, यह उदार भाषा है। यह सरलता व सहजता की भाषा है, जो इसे सूचना प्रौद्योगिकी व बेव के अनुकूल बनाती है। यह जनमानस, ज्ञान–विज्ञान, संविधान, व्यापार व बाजार एवं सभी मातृभाषाओं को साथ लेकर चलने वाली भाषा है। भाषा बहता हुआ नीर है जो अपना रास्ता खुद ढूँढ़ लेती है तथा सांस्कृतिक, सामाजिक, व्यवसायिक आधारों पर अपना बहाव खुद बना लेती है। भाषा का प्रसार स्वयं से ही संभव होता है। भाषा संस्कृति का दूत बनकर विश्व भर के लोगों को एक दूसरे से जोड़ती है और मित्रता की स्थापना करती है। अमेजन डाट काम/फ्लिपकार्ट के 30 प्रतिशत व्यापार का आधार हिंदी है। जब तक हिन्दी को कार्यालय एवं अनुवाद की भाषा की अवधारणा के रूप में मानेंगे तब तक हिंदी की दशा यही रहेगी।

विज्ञान से दुनिया की व्याख्या होती है, परन्तु हम जैसे वैज्ञानिकों, तकनीकी सहयोगियों एवं प्रशासनिक वर्गों के लिये दुनिया ही विज्ञान होती है। प्रो. मेघनाद साहा ने कहा था कि ''विज्ञान मानव का सेवक है'' अर्थात् विज्ञान को मानवता की सेवा और देश के आर्थिक विकास के लिये काम में आना चाहिये। हमें अपने शोध को जनमानस की भाषा में व्यक्त करना चाहिये नहीं तो वह औपचारिक शोध और विज्ञान का सेवक बनकर रह जायेगा। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में परिवर्तन की चाल इतनी तेज है कि हमारी कल्पना शक्ति भी उसके साथ नही चल सकती। भाषा की शक्ति का अंदाजा उसके गायब होने के बाद होता है, अतः भाषा को जीवन्त बनाये रखने के लिये हमें प्रयासरत रहना चाहिये। आज के कागज, कलम रहित स्पर्श युग में भाषा के प्रचार–प्रसार के लिये इसे और अधिक आधुनिक बनाने की आवश्यकता है। अभी दुनिया में 6500 भाषायें प्रयोग में हैं जिनमें से आने वाले समय में 90 प्रतिशत लुप्त हो जायेंगी। अभी हमारे देश में 250 से भी ज्यादा भाषायें विलुप्त हो चुकी हैं।

भारतेन्दु जी के शब्दों में ''हिंदी बढ़ेगी तो सभी भाषायें बढ़ेंगी'', निज भाषाओं और मातृ भाषाओं का भी विकास होगा। वैश्विक शिक्षा पद्धति अंग्रेजी में होने के कारण अंग्रेजी की महत्ता बढ़ती गयी। यदि पठन पाठन की सामग्री हिंदी में उपलब्ध हो जाये तो हिंदी का स्तर स्वतः ऊँचा हो सकेगा। हिंदी एक भाषा नहीं बल्कि एक संस्कृति है जो सम्पर्क भाषा एवं दायित्वों को निभाने का कार्य करती है। अपने धर्म में रहते हुये मर जाना भी दूसरे के धर्म से कम भयावह व श्रेष्ठ होता है अर्थात् राष्ट्रभाषा में काम करना ही श्रेयस्कर होगा (निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।। बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिय को सूल)। जो राष्ट्रप्रेमी है उसे राष्ट्रभाषा प्रेमी होना चाहिये। यह गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'हिंदी भवन' की विश्वभारती शांति निकेतन में स्थापना करके दिखाया। पद्म श्री फादर कामिल बुल्के ने रामचरित मानस का अनुवाद अंग्रेजी में एवं हिंदी शब्द कोष की रचना किया। प्राध्यापक दाई क्यू ने हिंदी उपन्यास 'गोदान' को जापानी भाषा में अनुवादित किया और सरल हिंदी व्याकरण की रचना की । स्वागत एवं सत्कार के लिए हिंदी में अनेकों स्तुतियाँ लिखी हैं। एक उदाहरण इस प्रकार है:

- आप तो एक पारस हैं, जो सोना पल में करते हैं।
- कुशल शिल्पकार जो पत्थर सुघड़ मूर्ति में ढलते हैं।
- मिले सौगात मेरे भाग्य हैं; श्रीमान् जी आये हैं।
- अभिनन्दन हमारे मन–नमन वंदन करते हैं।

विश्व हिंदी सम्मेलन की शुरूआत सन् 1976 में की गई। जापान दुनिया का एक ऐसा देश है जहाँ पर उच्च शिक्षा एवं प्रशासन की भाषा जापानी है। वहाँ पर ज्ञान–विज्ञान की ऐसी व्यवस्था बन गई है जिसमें जापानी भाषा–भाषी एवं सभी नागरिक शामिल हो सकते हैं। विद्यार्थी एवं विद्वान, तकनीकी के विकास और विज्ञान की उन्नति में योगदान दे रहे हैं। इसी प्रकार की व्यवस्था यदि हिंदी के साथ भी हो जाये तो देश के सभी नागरिक इसमें शामिल हो सकते हैं। संवेदना है तो संवाद है, जिज्ञासा है तो ज्ञान है, ज्ञान है तो भाषा बनी ही रहेगी। हीन भावना छोड़कर हिंदी में कर काम। यह केवल भाषा नही, हम सब की पहचान।

अपनी कमियाँ कभी किसी को न बताएँ, लेकिन खुद अपनी कमियाँ जरूर स्वीकार करें, क्योंकि जब तक आप खुद अपनी कमी नहीं स्वीकार करेंगे; तब तक आप उसे दूर करने की कोशिश नहीं करेंगे और याद रखिये एक छेद भी नाव को डुबोने के लिए काफी होती है।

– अज्ञात

संस्थान में राजभाषा की गतिविधियाँ

राजभाषा कार्यशाला– 11 मार्च, 2019

वर्ष 2019 की प्रथम तिमाही की राजभाषा कार्यशाला ''कार्यालय के कार्यों में हिन्दी की उपादेयता'' विषय पर दिनांक 11.03.2019 को सम्पन्न हुई। संस्थान के प्रत्येक अनुभाग से दो प्रतिभागी प्रशिक्षण में सम्मिलित हुए। राजभाषा कार्यशाला का शुभारम्भ संस्थान के निदेशक डा. जगदीश सिंह के सम्बोधन से हुआ। निदेशक महोदय ने संसदीय राजभाषा समिति के निरीक्षण दिनांक 25.02.2019 को दिये गये आश्वासनों से सभी प्रतिभागियों को अवगत कराया एवं उसे पूरा करने के लिए सभी लोगों से प्रशासनिक कार्यों में शत–प्रतिशत कार्य हिन्दी में करने के लिए प्रेरित किया। निदेशक महोदय ने धारा 3 (3) में आने वाले सभी कागजात द्विभाषी जारी किये जाये, अंग्रेजी में प्राप्त पत्रों का उत्तर क व ख क्षेत्रों में हिंदी में देने का शत–प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त किया जाये। सभी प्रतिभागियों से हिंदी में किये जा रहे कार्यों का विवरण हिंदी सेल के मेल पर उपलब्ध कराया जाये। राजभाषा कार्यशाला का प्रथम व्याख्यान डा. एस.के. वर्मा, प्रधान वैज्ञानिक द्वारा हिन्दी का प्रगामी प्रयोग कैसे बढ़ाये विषय पर दिया एवं इसके बाद प्रतिभागियों से हिन्दी में प्रगामी प्रयोग में होने वाली कठिनाइयों को दूर करने पर चर्चा की गयी। दूसरा व्याख्यान डा. आत्मानंद त्रिपाठी, वैज्ञानिक द्वारा कार्यालय में प्रतिदिन प्रयोग किये जाने वाले शब्दों को अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करके बताया एवं बाद में अनुवाद कार्य में होने वाली कठिनाईयों पर चर्चा कर समाधान बताया। इस अवसर पर प्रभारी प्रमुख फसल सुधार डा. पी.एम. सिंह एवं फसल सुरक्षा डा. के. के. पाण्डेय उपस्थित रहे। धन्यवाद ज्ञापन डा. डी. आर. भारद्वाज एवं संचालन डा. रामेश्वर सिंह द्वारा किया गया। इसके उपरान्त वर्ष की प्रथम कार्यशाला में दिये गये प्रशिक्षण पर अधिक से अधिक अनुपालन सुनिश्चित करने की अनुरोध किया गया।

राजभाषा कार्यशाला में विचार–विमर्श

राजभाषा कार्यशाला– 6 जून, 2019

राजभाषा वार्षिक कार्यक्रम के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए वर्ष की दूसरी कार्यशाला दिनांक 06. 06.2019 को आयोजित की गयी। कार्यशाला की अध्यक्षता संस्थान के कार्यकारी निदेशक डा. एस.के. वर्मा ने किया। संस्थान में चल रहे सब्जी आधारित शोध एवं प्रसार कार्यों में हिन्दी के प्रयोग पर संतोष व्यक्त करते हुए उन्होने हिंदी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिंदी में दिये जाने पर जोर दिया और साथ ही राजभाषा को बढ़ावा देने के लिए अन्य देशों का उदाहरण दिया। कार्यशाला में डा. हरे कृष्ण, प्रधान वैज्ञानिक द्वारा ''प्रशासनिक कार्यों में राजभाषा कार्यान्वयन को बढ़ावा'' विषय पर व्याख्यान में राजभाषा का विधिक महत्व एवं वर्तनी शुद्धता विषय पर विस्तार से बताया गया। व्याख्यान के बाद विभागाध्यक्ष डा. पी.एम. सिंह ने वर्तनी शुद्धता पर चर्चा की। राजभाषा कार्यशाला का संचालन डा. इन्दीवर प्रसाद एवं धन्यवाद ज्ञापन डा. डी.आर. भारद्वाज ने किया। राजभाषा कार्यशाला के आयोजन में राजभाषा कार्यन्वयन समिति के सदस्य डा. ए.एन. त्रिपाठी, डा. राजशेखर रेड्डी, डा. एस.के. सिंह एवं सदस्य सचिव डा. रामेश्वर सिंह उपस्थित थे।

निदेशक का सम्बोधन्

प्रशिक्षणार्थिनी को प्रमाण पत्र वितरण

> जो कल थे, वो आज नहीं हैं। जो आज हैं, वे कल नहीं होंगे। होने, न होने का क्रम, इसी तरह चलता रहेगा, हम हैं, हम रहेंगे, यह भ्रम भी सदा पलता रहेगा। सत्य क्या है? होना या ना होना? या दोनों ही सत्य हैं? जो है, उसका होना सत्य है, जो नहीं है, उसका न होना सत्य है। मुझे लगता है कि होना–न होना एक ही सत्य के दो आयाम हैं, शेष सब समझ का फेर, बुद्धि के व्यायाम हैं। किन्तु न होने के बाद क्या होता है, यह प्रश्न अनुत्तरित है। प्रत्येक नया नचिकेचा, इस प्रश्न की खोज में लगा है। सभी साधकों को इस प्रश्न ने ठगा है। शायद यह प्रश्न, प्रश्न ही रहेगा। यदि कुछ प्रश्न अनुत्तरित रहें तो इसमें बुराई क्या है? हाँ, खोज का सिलसिला न रूके, धर्म की अनुभूति, विज्ञान का अनुसंधान, एक दिन अवश्य ही रूद्ध दार खोलेगा। प्रश्न पूछने के बजाय यक्ष स्वयं उत्तर बोलेगा।– अटल बिहारी वाजपेयी

संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति द्वारा निरीक्षण (23–25 फरवरी, 2019)

समन्वय कार्य

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति द्वारा वाराणसी स्थित केंद्रीय सरकार के कार्यालयों के निरीक्षण के समन्वय कार्य हेतु भा.कृ. अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी को नामित किया गया। राजभाषा निरीक्षण सम्बन्धी दौरा कार्यक्रम 23–25 फरवरी, 2019 को सम्पन्न हुआ। राजभाषा निरीक्षण सम्बन्धी दौरे के सुचारू संचालन एवं संयोजन हेतु संस्थान के निदेशक द्वारा डा. जगदीश सिंह, प्रधान वैज्ञानिक को नोडल अधिकारी नामित किया गया एवं पाँच समितियाँ गठित की गयी जो उनके आगमन से लेकर निरीक्षण एवं प्रस्थान तक उनके परिवहन, आवास एवं भोजन व्यवस्था, निरीक्षण क्रिया कलाप, प्रेस मीडिया एवं फोटोग्राफी प्रबंधन सभी कार्य सफलतापूर्वक सम्पन्न किये।

निरीक्षण, 25 फरवरी, 2019

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी के निदेशक डा. बिजेन्द्र सिंह ने सर्वप्रथम उक्त संसदीय समिति के संयोजक माननीय डॉ. प्रसन्न कुमार पाटसाणी, संसद सदस्य (लोक सभा) एवं श्री प्रदीप टम्टा माननीय सांसद (राज्य सभा) तथा समिति के सभी अधिकारियों का स्वागत किया एवं निरीक्षण में उपस्थित संस्थान एवं मुख्यालय के अधिकारियों का परिचय कराया। इसके उपरांत निरीक्षण का शुभारम्भ समिति के संयोजक द्वारा किया गया। उन्होंने राजभाषा को बढ़ावा देने के लिए अन्य देशों का उदाहरण दिया जो अपने भाषा में शोध कर विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आते हैं। इसके अतिरिक्त उन्होने संस्थान में शोध एवं प्रसार कार्य की सराहना की। हिंदी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिंदी में दिये जाने पर संतोष व्यक्त किया। संस्थान से लगातार प्रकाशित होने वाली राजभाषा पत्रिका एवं अन्य 18 प्रकाशनों की प्रशंसा की। पिछले एक वर्ष के दौरान विज्ञापन और प्रचार पर किये गये कुल खर्च में हिंदी में किये गये खर्च पर संतोष व्यक्त किया। संस्थान में हिंदी अधिकारी एवं अनुवादक पदों को भरने हेतु कार्रवाई करने की सलाह दी गयी। सभी कम्प्यूटर में यूनिकोड साफ्टवेयर टूल इंस्टाल किये जाने पर खुशी जाहिर की गयी। निरीक्षण उपरान्त संस्थान द्वारा प्रकाशित राजभाषा पत्रिका ''सब्जी किरण'' वर्ष 12 (अंक 1 एवं 2) का विमोचन संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति के संयोजक मा. डा. प्रसन्न कुमार पाटसाणी द्वारा किया गया।

प्रदर्शनी का अवलोकन

अध्यक्ष का स्वागत

राजभाषा कार्य का निरीक्षण

प्रश्नों का उत्तर देते अधिकारी

भा.कृ.अनु.प. द्वारा प्रश्नोंत्तर

समिति के साथ संस्थान के अधिकारी गण

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी के
क्षेत्रीय शोध केन्द्र एवं कृषि विज्ञान केन्द्र

क्षेत्रीय शोध केन्द्र, सरगटिया, कुशीनगर, उत्तर प्रदेश

कृषि विज्ञान केन्द्र, कुशीनगर, उत्तर प्रदेश

कृषि विज्ञान केन्द्र, भदोही

कृषि विज्ञान केन्द्र, देवरिया

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान

पोस्ट बैग नं. 01 जक्खिनी (शाहंशाहपुर)
वाराणसी– 221 305 (उ.प्र.)

फोन : 91&542&2635236, 2635237, 2635247 फैक्स : 91&5443&229007

ई–मेल : directoriivr@gmail.com वेबसाइट : www.iivr.org.in

भाकृअनुप
ICAR

Graphic Arts : 9838106730